डॉ. नागनाथ शंकरराव भेंडे

जन्मतिथि : 05 मई 1980

जन्मस्थान : कोरियाल, पोस्ट- सावली, ता. कमलनगर, जि. बिदर, राज्य- कर्नाटक-585417

शिक्षा : बी.ए., एम.ए. (हिन्दी), बीएड., एम.एड. गुलबर्गा विश्वविद्यालय, कलबुर्गी (कर्नाटक) से उपाधियाँ प्राप्त कर लिया है। एम.फिल. मदुरै कामराज विश्वविद्यालय मदुरै (तमिलनाडू) से और पीएच.डी. कला, विज्ञान व वाणिज्य महाविद्यालय, नलदुर्ग, जिला- उस्मानाबाद, डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद (महाराष्ट्र) से उपाधि पायी।

संगोष्ठी : राज्य, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों में सहभागी एवं शोध प्रपत्र का पठन प्रस्तुत किया। साथ ही विषय प्रवर्तक के रूप में भी राष्ट्रीय संगोष्ठी का सत्र संभाला है।

रेडियो : दस मिनट के तीन बार प्रोग्राम प्रस्तुत किये। जिनमें अलग-अलग विषयों पर भाषण दिया।

आकाशवाणी ऑल इंडिया रेडियो, स्टेशन कलबुर्गी (गुलबर्गा) कर्नाटक

कार्य अनुभव : जूनियर कॉलेज से पढ़ाने की शुरुआत की और अनेक संस्थाओं में काम किया, जिनमें मुरारजी देसाई, नवोदय महाविद्यालय, सरकारी महाविद्यालय यादगीर सरकारी महाविद्यालय बिदर और सरकारी महाविद्यालय (स्वायत्त) कलबुर्गी कर्नाटक राज्य। इन आदि संस्थाओं में काम करते हुए साहित्यिक रुचि रहने के कारण 2014 में यशपाल का रचना संसार, 2020 में हिन्दी साहित्य के विविध आयाम पुस्तक प्रकाशित है। हायर प्राइमरी के शिक्षकों को ट्रेनिंग भी दिया। साहित्यिक प्रेरणा डॉ. हाशमबेग मिर्झा सर जी से प्राप्त हुई है। यह मेरी दूसरी पुस्तक प्रकाशित है। मेरे आलेख अनेक पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों में प्रकाशित है। कुछ कविता और अनूदित साहित्य भी प्रकाशित हैं।

स्थायी पता : डॉ. नागनाथ शंकरराव भेंडे, मु. कोरियाल, पो. सावली, ता. कमलनगर,
जि. बिदर-585 417, कर्नाटक राज्य
मो. 9008440921, 6364556721
Email : nagnathbhende@gmail.com

पूजा पब्लिकेशन
नौबस्ता, कानपुर-208021
Mob.: 09415909291, 9839991140
E-mail : pujapublication0512@gmail.com

₹ 215.00
ISBN 978-93-83171-47-7
9 789383 171477

समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में विविध स्वर ✻ सं. डॉ. नागनाथ शंकरराव भेंडे

समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में विविध स्वर

संपादक
डॉ. नागनाथ शंकरराव भेंडे

ISBN : 978-93-83171-47-7

पुस्तक : समकालीन हिंदी कथा साहित्य में विविध स्वर

संपादक : डॉ. नागनाथ शंकरराव भेंडे

प्रकाशक : पूजा पब्लिकेशन
6 बी, बौद्ध नगर, नौबस्ता, कानपुर-208021
मो. 9415909291, 9653096899
Email : pujapublication0512@gmail.com

संस्करण : प्रथम, 2020
© : लेखकाधीन
मूल्य : 215. 00 (दो सौ पन्द्रह रुपये मात्र)

शब्द-सज्जा : रुद्र ग्राफिक्स, कानपुर

मुद्रक : आर्यन प्रिंटर्स, नई दिल्ली

Samkaleen Hindi Katha Sahitya Me Vividh Swar
Editor : Dr. Nagnath Shankarrao Bhende
Price : Two Hundred Fifteen Rs. Only.

समर्पण

पूज्यनीय
माता-पिता
को
सादर

ालेख

के नाम पर दो शब्द लिखकर उनके अमूल्य योगदान को सीमित (कम) नहीं करना चाहता हूँ। बल्कि इन सभी विद्वानों के प्रेम और स्नेह की मजबूत डोर में बंधे रहना चाहता हूँ।

इस पुस्तक को पूर्णत्व की ओर ले जाने का श्रेय और सहयोग हमारी शिक्षण संस्था के सभी पदाधिकारियों के मार्गदर्शन और आशीर्वाद से ही संभव हुआ है। इसके निर्माण में हमारे जिन-जिन स्नेही, मित्रों और हितचिंतकों का महत्वपूर्ण सहयोग रहा है, उनके प्रति मैं हृदय से धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

प्रस्तुत पुस्तक में छपे विचार आलेकर्त्ताओं के अपने विचार हैं। उन विचारों के साथ संपादक का सहमत होना जरूरी नहीं है।

इस पुस्तक को प्रकाशित करने के लिए पूजा पब्लिकेशन, कानपुर (उत्तर प्रदेश) के श्री बृजेश कुमार पांडेयजी के प्रति अभार व्यक्त करते हैं।

अंत में मैं मेरे परिवारजनों का चिर ऋणी हूँ। सबसे बढ़कर मुझे जन्म देने वाले माता-पिताजी का ऋण कभी नहीं चुका सकता हूँ, उनके आशिर्वाद से यह कार्य सम्पन्न हुआ। इसका चिर ऋणी हूँ। प्रो. परिमला अम्बेकर मेडम जी, डॉ. गणेश पवार सर जी डॉ. राजू एस. बागलकोट मैडम जी का डॉ. हाशमबेग मिर्झा सर इन सभी का मुझे आशीर्वाद प्राप्त है।

स्थान : कलबुर्गी
दिनांक : 30 जुलाई, 2020

संपादक
डॉ. नागनाथ शंकरराव भेंडे

अनुक्रम

1. जूठन आत्मकथा में बेरोजगार प्रथा — 09
डॉ. नागनाथ शंकरराव भेंडे

2. 'द्रोणाचार्य एक नहीं', दलित साहित्य में कला क्षेत्र — 12
प्रा. डॉ. हाशमबेग मिर्झा

3. स्त्री, समाज और साहित्य — 15
डॉ. गोखले पंचशीला

4. रत्ना की बात - एक विश्लेषण — 18
डॉ. लक्ष्मण भोसल

5. समकालीन लेखिकाएँ और उनकी संवेदना — 23
डॉ. विलास अंबादास सालुंके

6. आत्मकथा का उद्भव और विकास — 26
प्रा. वेंकटेश हिबारे

7. भारतीय नारी पर पाश्चात्य प्रभाव — 29
सह शिक्षक मल्लिकार्जुन नड़विनकेरी

8. आपका बंटी उपन्यास में चित्रित नारी मनोविज्ञान — 31
डॉ. लक्ष्मी किशनराव मनशेट्टी

9. समकालीन हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध स्वर — 34
डॉ. बालाजी सोपूरे

10. 'शिकंजे का दर्द' आत्मकथा का चिन्तन — 38
डॉ. किरण गोपाल शिंदे

11. दोहरा अभिशाप — 41
डॉ. रवीन्द्र बनसोडे

12. हिन्दी महिला आत्मकथाओं का सामाजिक जीवन — 44
डॉ. नरेंन्द्र रोहिदास शिंदे

लेकिन पुरुष वर्ग स्त्रियों की उन्नति को पचा नहीं पा रहा है। साथ ही आज स्त्री को महत्व कम होने लगा है। इसका मूल कारण है कि आज का परिवेश जीवन रहा है। जहाँ पर मनुष्य से ज्यादा महतव मशीन को मिलने लगा है। इसी कारण आज कोई रिश्ते-नाते अपनापन यह सब बातें लुप्त हो गई हैं। मीडिया ने गजब कर डाला है इस संदर्भ में प्रा. जयराम श्री सूर्यवंशी लिखते हैं-

"मुक्तनारी के नाम पर अत्यधिक खुलापन, विवाह संस्था के प्रति अनास्था, बिन व्याही माँ, क्लब लाईफ, धूम्रपान, शराबखोरी, आगे जाने के लिए गलत तरीकों का इस्तेमाल आदि से स्त्री इस कथित समाज में पुरुष शोषण का शिकार होती है और कई तरह के गुप्त रोगों का शिकार पर तो दूसरी तरफ पुरुष भी अपनी बातों को व्यक्त करता है कि आज की स्त्री के सामने पति-पिता, बेटा-बेटी बेमतलब होते जा रहे हैं। इसका कारण कुछ औरतों को इतनी स्वच्छंदता और खुला जीवन जीने की आदी हो गई है।

वे अपने जीवन के अंतिम सांस तक जिन्दगी का मजा लेना चाहती हैं, लेखक सूर्यकान्त नागरजी ने अपनी कहानी में लिखते हैं "कहानी की स्त्री पात्र मीनू और उसका पति अधीर दोनों नौकरी करते हैं। मीनू स्वभाव से बहुत स्वछंदतावादी और खुलापन, स्वीकार वाली औरत है। उसकी नजर में पति अधीर सास, ससुर, बच्चे आदि की कोई कीमत नहीं है। विवाह के बाद जब अधीर अपना स्कूटर अपने छोटे भाई के हवाले करता है तो गुस्से में आकर मीनू कहती है-"एक दिन तुम मुझे भी अपने भाई के हवाले कर देना" इसके अलावा दोनों के बीच दरार पैदा होती है। मीनू भी अपना संबंध अपने बॉस के साथ अक्सर चलता है। इधर घर के सारे कामकाज की देखभाल मीनू का पति अधिक संभालता है। जब अधीर को घर का काम करने पर अहसास होने लगता है। कि वह औरत बनता जा रहा है, अर्थात् 'बकरा' बना है सभी रिश्तेदार को टेप करके पति के खोटै सिक्के बनाकर सुनाती है। इस प्रकार से आज की नारी में नशापन भी आमबात हो गई है। पाश्चात्य सभ्यता का आधुनीकरण हमारी भारतीय औरतों ने भी शराब पी रही है।

संदर्भ

1. अनुसंधान त्रैमासिक शोध पत्रिका अक्टूबर-2012 मार्च 2013 पृ. 37
2. डॉ. सूर्यकांत नागर, हंस पत्रिका अप्रैल 2010
3. अनुसंधान त्रैमासिक शोध पत्रिका अक्टूबर 2012 मार्च 2013, पृ. 42

सह शिक्षक
श्री मोराजी देसाई पाठशाला
अर्जुणगी अफजलपुर ता. कलबुर्गी
जिला- कर्नाटक राज्य

■■■

8.

आपका बंटी उपन्यास में चित्रित नारी मनोविज्ञान

डॉ. लक्ष्मी किशनराव मनशेट्टी

आधुनिक गद्य विधाओं में उपन्यास के महत्वपूर्ण ज्ञान है। विषय-वस्तु की दृष्टि से हिन्दी में ढेर सारे मनोविज्ञानवादी, साम्यवादी ऐतिहासिक आंचलिक एवं प्रयोगवादी उपन्यास लिखे गये, इनमें मनोविश्लेषणवादी उपन्यास का संबंध मानव मन से है। हिन्दी मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों पर मनोविज्ञानवाद के अविष्कारकर्ता फ्रायड तथा डॉ. बूमर का प्रभाव दिखाई देता एवं मनोवैज्ञानिकवाद के अनुसार अचेतन मन में मनुष्य के सभी उन्मुख वासनाएँ रहती है। वासनाओं के दमन से मानसिक रचना भिड़त है। व्यक्तिहीनता की भावना से पीड़ित रहता है। हिन्दी मनोविश्लेषणवादी (मनोवैज्ञानिक) उपन्यासों पर इन प्रवृत्तियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से नजर आता है। मनोविश्लेषणवादी एवं अज्ञेय का सराहनीय योगदान रहा है। मन्नू भंडारी ने भी विज्ञान पर आधारित आपका बंटी नामक उपन्यास लिखा है। जैनेन्द्र कुमार के परख सुनीता-त्यागपत्र, कल्याणी सुखदा, विवर्त एवं व्यक्ति आदि मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में पत्राचारों के मन की उलझनों, गुत्थियों एवं शंकाओं का निरूपण किया है। सुखद मंत्र त्यागपत्र सुनिता इन उपन्यासों में कण्ठस्वस्त अतृप्त एवं आत्मपीड़ा की गाथा का मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है। इसलिए जोशी के सन्यासी पर्दे की रानी, प्रेम और छाया इन उपन्यासों में मनोवैज्ञानिकता दृष्टिगोचर होती है। जोशी ने इन उपन्यासों में मानव मन की कुण्ठाओं एवं आंधियों का विश्लेषण किया है। 'अज्ञेय' ने भी 'शेखर एक जीवनी', 'नदी के द्वीप', अपने -अपने सब अजनबी' नामक में उपन्यासों मनोवैज्ञानिक को प्रस्तुत किया है। मन्नू भंडारी द्वारा लिखित उपन्यास 'आपका बंटी' मनोविज्ञान की दृष्टि से हिन्दी मनोविश्लेषणवादी उपन्यास की एक महान उपलब्धि मानी जा सकती है।

'आपका बंटी' मनोविज्ञान से ओत प्रोत उपन्यास है। हिन्दी साहित्य का यह बेजोड़ उपन्यास एवं अनूठा मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। जिसका प्रकाशन सन् 1973 में हुआ। इसमें बाल मनोविज्ञान के साथ साथ नारी मनोविज्ञान का चित्रण किया

है। बालमनों विज्ञानों पर आधारित यह हिन्दी का पहला उपन्यास है। इसमें तलाकशुदा माता-पिता के संतान की मनोवृत्ति का चित्रण किया है। इस उपन्यास का पात्र बालक बंटी है, जो बालमनों की दशा का यह सम्पूर्ण उपन्यास पट खड़ा हुआ है। बालमनो की दशा का यह एक अप्रतिम उपन्यास रहा है।

मन्नू भंडारी हिन्दी की एक जानी-मानी साहित्यकार है। उन्होंने अपने जीवन में कई उपन्यासों की एवं कहानी संग्रह, आत्मकथा और नाटक आदि लिखा है। उनकी कृतियों के पात्र की मीना किसी परिवेश से उपजे हुए नजर आते हैं। मन्नू भंडारी एक प्राध्यापिका के साथ-साथ सुप्रसिद्ध लेखिका रही है। उनके लेखन कार्य में पति राजेन्द्र यादव का भी योगदान माना जा सकता है। इन दोनों के संबंधों में (विवाह) की बात डॉ. मोहन मंगेशराव सांवत लिखते हैं- .

"मन्नू भंडारी से राजेन्द्र यादव का पहला परिचय कलकत्ता के बालीगंज शिक्षा सदन में हुआ। मन्नू भंडारी कलकत्ता के एक स्कूल में अध्यापिका थी। लेखक होने के कारण दोनों एक दूसरे को जानते थे। मन्नू जी की लेखन में रुचि विचारधारा थी। इस समय तक का (सन् 1956) राजेन्द्र यादव का 'उखड़े हुए लोग' भी प्रकाशित हो चुका था। लेखन की वजह राजेन्द्र यादव और मन्नू भंडारी का परिचय अनिष्ठता में बदलाव आ गया, और घनिष्ठता प्रेम में परिवर्तित हुआ। लेखन दोनों के बीच सेतु बनकर आ गया। मन्नू के पिताजी का विरोध होने पर भी 22 नवम्बर 1956 को उन्होंने रजिस्टर विवाह किया।" इस दम्पति को एक विन्यास भी हुआ जिसका नाम उन्होंने 'रचना' रखा। यह उनका वैवाहिक जीवन आगे चलकर सुखमय नहीं रहा। दोनों में अनबन होने लगी। पारिवारिक दोनों विभक्त हो गये। प्रस्तुत उपन्यास 'आपका बंटी' उपन्यास में मन्नू भंडारी के असक्त वैवाहिक जीवन का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

इस उपन्यास के संबंध में लेखिका अपने मनोगत में लिखती है-"अच्छे कर निगाहों और घायल होती संवेदना की निगाहों से देखी गई परिवार की यह दुनियाँ एक भयावान-दुखद बन जाती है। कहना मुश्किल है कि यह कहानी बालक बंटी की है या माँ शकुन की। सभी को एक दूसरे से ऐसे कालजे हैं, कि एक ही त्रासदी सभी को यातना बन जाती है।"

प्रस्तुत उपन्यास में तलाकशुदा पति-पत्नी का संवेदनात्मक कथ्य है। 'शकुन' कालेज की प्रिंसिपल है अजय डिवीजन मैनेजर है। दोनों भी पढ़े लिखे एवं नौकरी पेशा है। किन्तु दोनों में भी अहंभाव कूट-कूटकर भरा हुआ है। इसी अहंभाव के कारण दोनों में अनबन होती है। परिणामतः वे विभक्त रहने लगते हैं। बालक बंटी माँ शकुन के साथ कालेज के कार्टर में रहता है। अजय कभी-कभी बंटी से मिलने आता है। बंटी को लगता है कि उसके पिताजी अजय उसके साथ खेले लेकिन ऐसा नहीं हो सकता। माता-पिता के रहते हुए भी बंटी दोनों का प्रेम एक साथ नहीं पा सकता।

बंटी का लगाव फूफी से अधिक- बंटी को लगाव उनकी फूफी से अधिक है।

एक बार बंटी मम्मी के साथ कालेज जाता है। तब मम्मी का प्रिंसिपल का रूप देखकर सहमा-सहमा रहता है। मन ही मन में उसे घुटन महसूस होती है। यही वे वह मनोरुग्ण बनता है। शकुन भी अपने पति से विभक्त सुख-चैन नहीं पाती। वह भी नारी मनोवैज्ञानिकता का शिकार है। बंटी मनोवैज्ञानिक पात्र है। वह उसके पिता से वंचित है। माता के साथ ही रहता है, वह धीरे-धीरे मनोविकारों से ग्रसित हो जाता है। इस संबंध में कृष्णदेव शर्मा का मानना है, कि- "प्रस्तुत उपन्यास के बंटी का चरित्र मनोवैज्ञानिक दृष्टि से निश्चित ही एक महत्वपूर्ण चरित्र है। मम्मी के अत्यधिक दुलार के कारण बंटी के व्यक्तित्व का सही विकास नहीं होता" इस बाल मनोविज्ञान के अनुसार एक आयु-विशेष के बाद बालक को अपने समवयस्क बच्चों के साथ खेलना कूदना चाहिए, ताकि स्वः उसका स्वतंत्र अस्तित्व विकसित हो सके और वह स्वावलम्बन की ओर चल सके। बंटी का यह दुर्भाग्य है कि उसकी मम्मी उसे अधिक प्यार करती है कि बंटी अंततः एक पालन बच्चा बन गया। अर्थात बंटी मनोवैज्ञानिकता से ग्रस्त बच्चा है। दारुण दुःख से उत्पन्न टूटन-घुटन और संत्रास व्यक्ति को कुण्ठाग्रस्त बना देता है। बंटी इन पीड़ाजनक स्थिति को भोग रहा है। माता-पिता के अहं का टकराहट में अस्त्र बना बंटी तीनों परिवेश में पालतू ठोकर सबकी करुणा का पात्र बनके आपको बंटी यानी सब का बंटी बन जाता है। शकुन के साथ रहकर भी बंटी स्वयं को अकेला एवं पराया मानता है। शकुन जब डॉ. जोशी से पुनर्विवाह करके उसके घर रहने के लिए चली जाती है, तब भी बंटी को नये माहौल में ढलते समय बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

'आपका बंटी' का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि यह उपन्यास मनोवैज्ञानिकता से ओत-प्रोत है। इसमें चित्रित पात्र बंटी बाल मनोविज्ञान से ग्रस्त है। शकुन नारी मनोवैज्ञानिक रूप से अस्त है। यह उपन्यास 196 पृष्ठों से सम्पन्न हुआ। इसमें काम भावना की पीड़ा का भी विवरण किया गया है। साथ ही मानसिकता के कारण ही व्यक्ति के भावों को व्यक्त इस उपन्यास में मानसिक संसार का मनोवैज्ञानिक रूप से प्रस्तुतीकरण किया है। शकुन का अभावग्रस्थ जीवन और घुटन-छटपटाहट आदि रूप से दुखद भावनाओं का इस उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। जब माता का दूसरा विवाह हो जाने पर बंटी अपने आप से टूट जाता है। किसी के साथ मिलजुल नहीं सकने के कारण मानसिक रोगी बन जाता है।

संदर्भ

1. उखड़े हुए लोग : संवेदना एवं शिल्प-डॉ. मोहन मंगेशराव सावंत पृ.18
2. आपका बंटी : मन्नू भंडारी मनोबल लहलहाता।
3. वही पृ. 103
4. मन्नू भंडारी के उपन्यास साहित्य का विश्लेषण अध्ययन-डॉ. नीरजा पृ. 110

श्री माधवराव पाटिल महाविद्यालय मुरूम
जिला-उस्मानाबाद, महाराष्ट्र राज्य

■■■

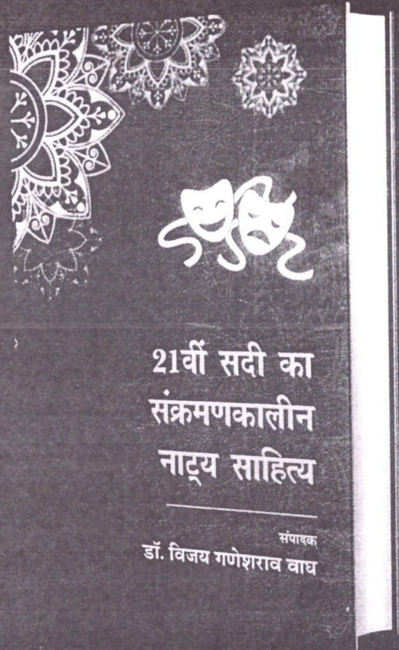

A. R. PUBLISHING CO.
Publishers & Distributors
1/11829 Panchsheel Garden, Naveen Shahdara
Delhi-110032, Mob. 9968084132, 7982062594
e-mail: arpublishingco11@gmail.com

978-93-88130-89-9
9789388130899

21वीं सदी का संक्रमणकालीन नाट्य साहित्य

संपादक : डॉ. विजय गणेशराव वाघ

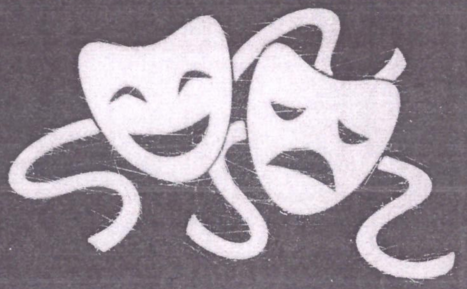

21वीं सदी का संक्रमणकालीन नाट्य साहित्य

संपादक

डॉ. विजय गणेशराव वाघ

मेरी लाडली पुत्री देवश्री
की मुस्कान को

ए. आर. पब्लिशिंग कंपनी
1/11829, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032
फोन : +91 9968084132, +91 7982062594
e-mail : arpublishingco11@gmail .com

21VIN SADI KA SANKRAMANKALEEN NATYA SAHITYA
Edited by Dr. Vijay Ganeshrao Wagh

ISBN : 978-93-88130-89-9
Criticism

© लेखकाधीन

प्रथम संस्करण : 2022

मूल्य : 395.00

साज-सज्जा : शेष प्रकाश शुक्ल
मोबाइल : 97-16-54-35-13

इस पुस्तक के किसी भी अंश को किसी भी माध्यम में प्रयोग करने के लिए प्रकाशक व लेखक से लिखित अनुमति लेना अनिवार्य है।

कॉम्पैक्ट प्रिंटर, दिल्ली-110 032 में मुद्रित

हैआदमी अर्थहीन, असंगत, अकेला, अजनबी, निर्वासित, बेगाना एक ही सिक्के के ये कितने नाम है?''[10] स्वातंत्र्योत्तर वर्षों के दबाव-तनाव के कारण मनुष्य न केवल जरूरतों का ढ़ेर बनकर रह गया, अपितु अपनी पहचान भी खो बैठा है। फलतः वह अजनबी और आत्मनिर्वासित भी हो गया है। विश्वजीत का उपर्युक्त कथन इसी सच्चाई को प्रस्तुत करता है। आज वर्तमान युग में यह अकेलापन व्यक्ति को मिला एक अभिशाप है, जिसे प्रत्येक व्यक्ति भोगने के लिए विवश है। इस प्रकार विष्णु जी ने व्यक्ति के अकेलेपन एवं उससे उत्पन्न व्यथा को सूक्ष्मता से चित्रित किया हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में 'टूटते परिवेश' नाटक की जाँच-परख करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि, यह नाटक आज भी प्रासंगिक है" परंतु आज कहीं-न कहीं इन स्थितियों में बदलाव की आवश्यकता है" संयुक्त परिवार को टिकाए रखने की आवश्यकता है। नयी-पुरानी पीढ़ी में वैचारिक संतुलन लाने की जरूरत है। वृद्धों को उनके अंतिम दिनों में मानसिक आधार देने की, उनके अकेलेपन को कम करने की जरूरत है। इस पारिवारिक विघटन तथा मानसिक संघर्ष को खत्मकरने की आवश्यकता है। भावनाओं एवं विचारों का मेल कराने की अब आवश्यकता आन पड़ी है। तभी संयुक्त परिवार टिक सकेंगे और इन समस्याओं से हम निजात पायेंगे। यही वर्तमान समय की माँग है, अन्यथा हमें भविष्य में बहुत ही भयावह स्थितियों का सामना करना पड़ सकता है। इसप्रकार की स्थितियां अधिकतर पढ़े-लिखे लोगही उत्पन्न करते हैं, जिन्हें कम करना अब उनका ही कर्तव्य है। विष्णु जी भी इस नाटक में परिवर्तित मानसिकता एवं उसके स्वीकार की ओर इंगित करते हैं।

संदर्भ

1. विष्णु प्रभाकर, संपूर्ण नाटक, भाग-4, टूटते परिवेश, पृ. 32-33
2. विष्णु प्रभाकर, वही, भाग-2, टूटते परिवेश, पृ. 49
3. वही, पृ. 49-50
4. वही, पृ. 32
5. वही, पृ. 32
6. वही, पृ. 32
7. वही, पृ. 241
8. वही, पृ. 33
9. वही, पृ. 234-235
10. वही, पृ. 230
11. डॉ. बी.एस. विवेकानंदन पिल्लै, विष्णु प्रभाकर के नाट्य साहित्य में सामाजिक चेतना
12. डॉ. दिनेश चंद्र वर्मा, समकालीन हिंदी नाटक एवं नाटककार
13. डॉ. वंदना मिश्र, विष्णु प्रभाकर के नाटकों में मानवीय संवेदना

9. संत तुकाराम के जीवनगाथा की नाटकीय अभिव्यक्ति 'अभंगगाथा'

–डॉ. लक्ष्मी मनशेट्टी

आधुनिक नाट्य साहित्य में नरेंद्र मोहन का जाना-माना नाम है। 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध एवं 21वीं सदी के प्रथम तथा द्वितीय दशक में उन्होंने हिंदी साहित्य को समृद्ध बनाने में अपना योगदान दिया है। नरेंद्र मोहन का जन्म 30 जुलाई, 1935 में लाहौर में हुआ। हिंदी और पंजाबी भाषा पर उनका प्रभुत्व था। 1952 में उन्होंने अंबाला (हरियाणा) से मैट्रिक परीक्षा प्राइवेट तौर पर उत्तीर्ण की। उन्हें स्कूल के जीवन से ही लिखने का शौक था। जी.एम.एन कॉलेज में उन्होंने दाखिला लिया। वे कथा, कविता और साहित्यिक लेख लिखते रहे। पंजाब यूनिवर्सिटी से बी.ए. तथा एम.ए. हिंदी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। कॉलेज पढ़ते-पढ़ते कविताएं एवं पत्र-पत्रिकाओं में लेखन करते रहे। 1959 को लुधियाना के एक कॉलेज में व्याख्याता पद पर नियुक्ति हुई। जालंधर, रोपड़, हिसार के कॉलेज में कई वर्षों तक अध्यापन कार्य किया। दिल्ली विश्वविद्यालय में प्राध्यापक के रूप में कार्यभार संभाला। नरेंद्र मोहन कई कविता लिखते थे। उनके कई कविता-संग्रह प्रकाशित हैं। कई कहानियों का उन्होंने संपादन-कार्य किया है। 'इस हादसे में', 'शाम ना होने पर', 'हथेली पर अंगारों की तरह' तथा अन्य कविता संग्रह उन्होंने लिखे। कई संपादकीय ग्रंथ भी लिखे हैं।

नाट्य साहित्य में नरेंद्र मोहन का अनूठा योगदान रहा है। सींगधारी (1988), कहै कबीर सुनो भाई साधो (1980), कलंदर (1991), नो मैंस लैंड (1994), अभंग गाथा (2000), मिस्टर जिन्ना (2005) मंच अँधेरे में (2009) आदि नरेंद्र मोहन के सुप्रसिद्ध नाटक रहे हैं। इन सभी नाटकों का सफल मंचन हुआ है। उनके नाटक मंचन के बारे में गुरुचरण सिंह भूमिका में लिखते हैं, ''नाट्य लेखन के समय नरेंद्र

मोहन को अधिक जूझना पड़ा है। प्रत्येक नाटक के मंचन के साथ वे खुद जुड़े रहे हैं तथा नाट्य मंचन को उन्होंने गंभीरता से लिया है। यही कारण है कि उनके नाटकों में नाटयानुभूति के साथ-साथ रंगानुभूति भी है। उनके सभी नाटक पहले मंचित हुए हैं, फिर प्रकाशित।''[1] नरेंद्र मोहन के नाटक सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था पर व्यंग्य कसते हैं।

सन 2000 में मंचित नाटक 'अभंग गाथा' उनकी योग्यता एवं उनकी सूझबूझ का परिचय देता है। यह नाटक मराठी संत तुकाराम महाराज के जीवन पर लिखा हुआ है। तुकाराम महाराज महाराष्ट्र के सुप्रसिद्ध संत कवि माने जाते हैं। उनके अभंग महाराष्ट्र में ही नहीं बल्कि संपूर्ण भारतीय साहित्य में लोकप्रिय रहे हैं। महाराष्ट्र के साथ भारत के कई हिस्सों में उनके अभंग पूरी श्रद्धा एवं भक्ति के साथ गाए जाते हैं।

'अभंग गाथा' केवल तुकाराम महाराज के नाटकीय जीवन की ही कहानी नहीं है, न ही तुकाराम की आध्यात्मिक साधना की विभिन्न अवस्थाओं का नाटकीय आलेख। एक विशेष दृष्टि से संत तुकाराम तथा उनका समय उभारने का यह एक प्रामाणिक प्रयास है। इस नाटक की रचना के पीछे एक सांस्कृतिक अध्ययन की चेष्टा है।

नाटक भी कहानी एवं उपन्यास की तरह वस्तुस्थिति को बयाँ करता है। नाटक की कथावस्तु भी किसी घटना, प्रसंग या चरित्र पर आधारित रहती है। प्रस्तुत 'अभंग गाथा' नाटक संत तुकाराम के प्रत्यक्ष जीवन पर आधारित है। यह नाटक लिखने के पहले नरेंद्र मोहन ने भी तुकाराम के जीवन परिचय एवं उनके जीवन से संबंधित स्थानों को प्रत्यक्ष रूप में देखे थे। निशिकांत मिरजकर के मतानुसार, ''नरेंद्र मोहन पुणे गए। उधर ठहरे। उन्होंने आलंदी-देहू की यात्रा की। देहू में तुकाराम के वंशजों से मिले। इंद्रायनी तट पर रमणीय परिसर जी भरकर देखा। भंडारा, पहाड़ी का चप्पा-चप्पा छाना। मन ही मन में तुकाराम के अस्तित्व के स्पंदनों का उन्होंने सर्वत्र अनुभव किया। फिल्म इंस्टीट्यूट जाकर 'संत तुकाराम' फिल्म देखी। दिलीप चित्रे, सदानंद मोरे के साथ चर्चा की। नाटक लेखन भी पूरा किया।''[2] अतः सफल नाटककार को नाटक लिखने के लिए काफी जिद्दोजहद करनी पड़ती है।

'अभंग गाथा' नाटक तुकाराम महाराज के जीवन को प्रस्तुत करता है। संत तुकाराम भक्तिकालीन वारकरी संप्रदाय के महाराष्ट्र के सुप्रसिद्ध संत रहे हैं। तत्कालीन समय में सामाजिक अराजकता, राजनीतिक उथल-पुथल, अनैतिकता, भ्रष्ट आचरण का माहौल था। ऐसे समय में तुकाराम महाराज ने अपने अभंगों द्वारा एक नई चेतना, एक नई उम्मीद जगाई थी। उनके अभंग महाराष्ट्र में ही नहीं बल्कि

संपूर्ण भारत में सुप्रसिद्ध हैं। तुकाराम के अभंग सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था पर गहराई से चोट करते हैं। साथ ही प्रजा को आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर करने का कार्य करते हैं। संतों की वाणी प्रत्येक व्यक्ति के लिए बड़ी उपयोगी सिद्ध होती है। दुनिया के तकलीफों में जब आदमी अशांत होकर भटकता है तो संतो के जीवन-चरित्र और उनके वचन उन्हें सही रास्ते के दर्शन कराते हैं। संतों के कर्म और वाणी जनता में नई आशा की किरण जगाते हैं। उनकी पावन वाणी सबको हर्ष और उल्लास से भर देती है।

मध्ययुगीन भक्तिकालीन साहित्य में संत तुकाराम के अभंग उतने ही महत्वपूर्ण रहे हैं जितने कबीर के दोहे, बिहारी के दोहे, मीराबाई के पद। भक्ति परंपरा में अपनी खास पहचान रखने वाले संत तुकाराम महाराज ने संसार के सभी सुख-दुख का सामना कर अपनी भक्ति विठ्ठल चरणों में समर्पित की। संत तुकाराम महाराज के बारे में कई किंवदंतियाँ प्रचलित हैं। संत तुकाराम का जन्म पूना के निकट इंद्रायनी नदी के तट पर हुआ था। तुकाराम काल निर्णय के बारे में कई विवाद हैं। फिर भी सामान्य धारणा के अनुसार, उनका जन्म शक 1520 (1598 ई या ई 1680) में हुआ था। अपने जन्म से उन्होंने 'मोरे' कुल को पवित्र किया था। उनका कुटुंब नाम अंबिले था।''[3]

महाराष्ट्र के विठ्ठल संप्रदाय में संत ज्ञानेश्वर, संत नामदेव, सावता माली, सेना नाई, गोरा कुंभार, देवदासी, कान्होपात्रा आदि अनेक संत हुए हैं। इनमें सुप्रसिद्ध तुकाराम महाराज भी रहे हैं। वारकरी संप्रदाय में उनका नाम सबसे ऊँचा रहा है। तुकाराम महाराज के अभंग सुप्रसिद्ध रहे हैं। उन्होंने मराठी में कई अभंग गाये हैं। उनका सब सुप्रसिद्ध अभंग है :

''जे का रंजले गांजले,
त्यासी म्हणे जो अपुले
तो ची साधु ओळखावा
देव तेथीची जाणावा।''[4] (मराठी अभंग)

तुकाराम महाराज के अभंग 'अभंग गाथा' के नाम से मशहूर है। वारकरी संप्रदाय के आराध्य दैवत पंढरपूर के भगवान विठ्ठल रहे हैं। तुकाराम के भी आराध्य दैवत विठ्ठल ही है। भगवान विठ्ठल के लिए उन्होंने अभंग गाये थे। यथा :

''सुंदर ते ध्यान उभे विटेवरी।
कर कटावारी ठेवूनिया।।
तुलसीचे हार गळा कासे पीतांबर।
आवडे निरंतर तेंचि रूप।''[5] (मराठी अभंग)

नरेंद्र मोहन ने तुकाराम के अभंगों पर 'अभंग गाथा' नाटक का लेखन, मंचन एवं प्रकाशन किया है।जिसका प्रकाशन सन 2000 में हुआ है। तुकाराम का व्यक्तिगत जीवन, उनकी अभंग सृजनात्मकता तथा उनकी अद्‌भुत आत्मानुभूति इन तीनों को नाटक में इस कुशलता से प्रक्षेपित किया गया है। जिससे तुकाराम के समकालीन सामाजिक संघर्षो को ही नाटक में केंद्रीय स्थान प्राप्त हो गया है।

'अभंग गाथा' नाटक तीन अंकों में विभाजित है। नाटक का आरंभ कीर्तन मंडली के अभंगों से होता है। संत तुकाराम का सारा जीवन अभंग में बिता है। इसी कारण जहां तुकाराम का उल्लेख आता है वहां अभंग का होना अत्यावश्यक है। उनके अभंग समाज के सारे परिस्थिति को बयाँ करते हैं। उनके सुप्रसिद्ध अभंगों की कुछ पंक्तियाँ :

"टिळा टोपी घालुनी माळ,
म्हणती आम्ही साधु।
दया धर्म चित्ती नाही,
ते जाणावे भोंदू।
कलियुगी घरोघरी,
संत झाले फार।
वितिभरी पोटासाठी,
हिंडती दारोंदार।"[6] (मराठी अभंग)

'अभंग गाथा' का आरंभ कीर्तन से किया गया है। सूत्रधार एवं कोरस का कार्य कीर्तन मंडली करती है। नाटक का श्री गणेशा इस अभंग से होता है :

"आम्हा घरी धन,
शब्दाचीच रत्ने।"

इस नाटक में चित्रित पात्र सदाशिव, तानाजी, दामोदर क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य का प्रतिनिधित्व करते हैं। नाटक के प्रथम दृश्य में हिंदू-मुसलमानों के दंगे, फसाद को दिखाया गया है। रास्ते में लड़ाई-झगड़े होने का दृश्य है। एक ओर नाटक मंडली गा रही है। तीनों वारकरी सदाशिव, तानाजी, दामोदर भीड़ को हटाने का प्रयास करते हैं। इसी बीच 'राजा' की सवारी वहां से गुजरती है। वारकरी रास्ते से हटने का नाम नहीं लेते, तब सदाशिव एक वारकरी के पेट में छुरा घुसाता है। अर्थात, इस नाटक के माध्यम से नाटककार ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि समाज के अंतर्गत उच्च वर्ग एवं निम्न लोगों के बीच संघर्ष सदियों से चला आ रहा है। कोई भी राजा या शासन इस संघर्ष को रोकने में कामयाब नहीं हो पाया है।

द्वितीय दृश्य में चारों ओर युद्ध का माहौल दिखाई देता है। चारों ओर से सेनाओं

के आने की आवाजें सुनाई देती है। इसमें साधारण लोगों की काफी जानें चली जाती है। संत तुकाराम जब एक आदमी की लाश को देखता है, तो वे अपना होश खोकर मूर्तवत बैठ जाता है। रुखमा जब विष्णुदास नाम्या का अभंग गाती है, तब तुकाराम चेतना अवस्था में आ जाते हैं। संत तुकाराम के गृहस्थ जीवन के बारे में निशिकांत मिरजकर लिखते हैं, "तुकाराम का गृहस्थ जीवन दमे की मरिज ज्येष्ठ पत्नी रुखमा है, जो पति के भविष्य को समझती है। कनिष्ठ पत्नी जीजाई है जो सदैव अभावग्रस्त और गृहस्थ जीवन के बोझ से त्रस्त झुँझलाई हुई है।"[7] संत तुकाराम की विट्ठल भक्ति एवं तुकाराम-मंबाजी का संघर्ष इस दृश्य में दिखाया गया है।

तृतीय दृश्य में भयंकर अकाल का दृश्य विधान है। इस दृश्य में भूखमरी का करुणादायी वर्णन है।सब लोग भूख के मारे तड़प रहे हैं। बिना अन्न-जल के सब छटपटा रहे हैं। आक्रोश कर रहे हैं। तुकाराम कर्कश पत्नी जीजाई की परवाह न करते लोगों को घर का अनाज देता है। भूख-प्यास से अकुलाती, तड़पती रुखमा प्राण त्याग देती है। इससे सिद्ध होता है कि तुकाराम महाराज का जीवन बहुत ही अभाव में बिता था। फिर भी वे विट्ठल भक्ति में तल्लीन रहा करते थे।

चतुर्थ दृश्य में संत तुकाराम बहुत ही क्षीण, संवेदना शून्य एवं भावविव्हल दिखाई देते हैं। संत तुकाराम कर्ज में डूबकर मंबाजी के चंगुल में फंस जाते हैं। अंत में तुकाराम दर-दर पहाड़ियों पर भटकने का दृश्य है। यहीं पर प्रथम अंक समाप्त हो जाता है।

'अभंग गाथा' नाटक के दूसरे अंक के प्रथम दृश्य में फतेह खाँ उन्मनावस्था में नजर आता है। संत तुकाराम के अभंग सुनकर वह अच्छा होता है। तुकाराम उसकी सेवा करता है। दूसरे दृश्य का आरंभ जिजाई और भगीरथी के वार्तालाप से होता है। इनके बातचीत से दूसरे दृश्य का पटाक्ष होता है। तीसरे दृश्य में तुकाराम और मंबाजी की अनबन होती है। मंबाजी और अन्य ब्राह्मण संत तुकाराम को पीटने का प्रयास करते हैं, तो तुकाराम के कीर्तनकार उसे बचाते हैं। मंबाजी के लोग मुस्लिम के दो लोगों की और बच्चे की हत्या करते हैं। यह देखकर तुकाराम अन्याय को मिटाना चाहता है।

चौथे दृश्य में मंबाजी 'मंगला' नामक वीरांगना को तुकाराम को मोहमाया में फंसाने को कहता है। मंगला भक्ति में तल्लीन होकर 'सुंदर ते ध्यान उभे विटेवरी' अभंग गाती है। मंबाजी तुकाराम और मंगला को सरेआम बदनाम करना चाहता है। मंगला की भक्तिभावना के सामने उसकी एक नहीं चलती। पाँचवे दृश्य में दिखाया है कि रामेश्वर भट्ट और मंबाजी तुकाराम को हर तरह से तकलीफ देते हैं। वे तुकाराम की अभंग गाथाओं को पत्थर बांधकर उन्हें नदी में डूबो देता है और तुकाराम पर

[illegible] लिखने की पाबंदी लगाता है। हताश तुकाराम नदी किनारे बैठकर मन ही [illegible] करते हैं।

[illegible] अंक के प्रथम दृश्य में बताया है कि मंबाजी के लोग संत तुकाराम [illegible] फतेह खाँ की हत्या करते हैं। जिससे तुकाराम उन्मनावस्था में भंडारे [illegible] पर चले जाते हैं। दर-दर भटकते रहते हैं। नाटक के अंतिम दृश्य [illegible] के लापता होने का जिक्र है। सबको लगता है कि मंबाजी ने ही [illegible] हत्या की होगी। मंबाजी को भी पछतावा करता रहता है। जीजाई [illegible] उसे समझाते हैं कि अभंग के रूप में तुकाराम अमर है। तुकाराम [illegible] स्वरूप की अनुभूति के बखान के साथ वारकरियों द्वारा ही नाटक [illegible] होता है।

[illegible] नाटक के माध्यम से नरेंद्र मोहन में सामाजिक विषमता को दर्शाया है। [illegible] भी ऊँच-नीच की खाई एवं वर्ग-संघर्ष जारी है। तुकाराम और मंबाजी [illegible] भावना से होता है। तुकाराम महाराज में सेवाभावी एवं सर्वधर्म समभाव [illegible]।

[illegible] की दृष्टि से 'अभंग गाथा' नाटक सफल रहा है। शांताराम, मंबाजी, [illegible], वैश्य, जीजाई तथा अन्य भूमिकाएं निभाने वाले पात्रों ने बहुत अच्छा [illegible] लगे ऐसा अभिनय किया है। शिवाजी देवरे के अनुसार-ष्तुकाराम और [illegible] भूमिका कर रहे पात्र किसी दूसरी भूमिका में नहीं उतरते। सभी पात्रों के [illegible] लिए अभिनय संकेत दिए गए हैं। युद्ध में लाशें गिरती देख तुका की [illegible] जाना या बेजुबाँ होना, तुकाराम का मानसिक संघर्ष, मंबाजी की [illegible] भाव, फतेह खाँ का हँसते-हँसते दर्द से कराहना, छटपटाना, बोलाजी [illegible] की बेचैनी इत्यादि जैसे अभिनेता नाटक के अभिनय पक्ष को मजबूत [illegible]।"[8] नाटक का प्रमुख पात्र संत तुकाराम होने के कारण सारा नाटक [illegible] घूमता है।

[illegible] धार्मिक,राजनीतिक, सामाजिक भेदभाव को एक साथ नाटक में [illegible] है। धर्म के ठेकेदारों का प्राबल्य, वर्गभेद, वर्णभेद, असमानता और [illegible], छुआछूत, जातिभेद ऐसे भँवर में फंसे हुए समय में तुकाराम का [illegible] था। उन्होंने बेहतर समाज की रचना-परिकल्पना के लिए अपने सरस [illegible] विषमताओं को रोक कर अपने मन के उद्गारों द्वारा इसका खुलेआम [illegible]

[illegible] दृष्टि से 'अभंग गाथा' एक सफल नाटक है। डॉ. नरेंद्र मोहन [illegible] के जीवन प्रसंग को जिस तरह नाटकीय शब्द दिए हैं, उन्हीं को

लेकर इस नाटक को मंच पर उतारा है। 'अभंग गाथा' में घटनाओं के कई आयाम हैं। जिन आयामों से तुकाराम महाराज के व्यक्तित्व को समर्थन मिलता है। इस नाटक की समस्त घटनाएँ देहू, संत तुकाराम के घर, भंडारा, पहाड़ी आदि जगहों में घटित होती है। तुकाराम की अभंग वाणी और जिंदगी एक दूसरे में गुँथी हुई है। उन्हें एक दूसरे के बिना समझा नहीं जा सकता। अभंगवाणी में यह एक खरा, दबंग, विद्रोही तुकाराम खड़ा दिखता है। अपनी पूरी मानवता के में, सुख-दुख में, तकलीफ-उल्लास में, पीड़ा आनंद में। नाटक में विडम्बना और कार्य व्यापार की तीव्रता सघनता का सफल समायोजन हुआ है। नाटकीय तनाव, संघर्ष, द्वंद्व शुरू से लेकर अंत तक मौजूद है। नाटकीय तनाव की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति अभंग को इंद्रायनी नदी में प्रवाहित करने की व्यवस्था में हुई है। यही नाटक का सर्वोत्तम अंश भी है। संत तुकाराम विक्षिप्त, निराश, बेबस दिखाई देता है। जीवन भर की कमाई-अभंग गाथा अपने हाथों से नष्ट कर देना कितना कष्टदायक हो सकता है, इसे अनुभव किया जा सकता है। तनाव की इससे सशक्त अभिव्यक्ति संभव ही नहीं है।

'अभंग गाथा' नाटक प्रकाश योजना, रंग शिल्प एवं ध्वनि संगीत योजना से युक्त है। 'अभंग गाथा' में करताले बजने की धुन, विणा, मृदंग तथा कीर्तन की धुन विठ्ठल... विठ्ठल... विठ्ठल... की धुन ने नाटक में जान फूंक दी है। इस नाटक में श्रव्य और दृश्य माध्यम दोनों की समान अभिव्यक्ति है। प्रस्तुत नाटक की भाषा हिंदी, मराठी, संस्कृत मिश्रित हैं। 'अभंग गाथा' शीर्षक नाटक के अंतर्गत भावों को बयाँ करता है।

'अभंग गाथा' एक सफल नाटक रहा है। संत तुकाराम के जीवन एवं उनके अंगों को केंद्र में रखकर इस नाटक की रचना की गई है। तुकाराम वारकरी संप्रदाय के प्रमुख संत थे। पंढरपुर के भगवान विठ्ठल उनके आराध्य दैवत रहे हैं। उनके हर एक अभंग में भक्ति के स्वर सुनाई देते हैं। वारकरी संप्रदाय में तुकाराम के अभंग भक्ति भावना से गाए जाते हैं। आज भी हर एक घर में 'अभंग गाथा' पढ़ी जाती है। अभंग गाए जाते हैं। तुकाराम के अभंग वाणी पर धार्मिक रूप से 'सप्ताह' का आयोजन किया जाता है। इतने महान संत तुकाराम के जीवन पर आधारित प्रस्तुत कृति हिंदी नाट्य साहित्य में विशेष स्थान रखती है। 21वीं सदी में 'अभंग गाथा' लोगों में भक्ति भावना उत्पन्न कराने में सार्थक है।

संदर्भ

1. नया परिदृश्य, नरेंद्र मोहन के नाटक, सं. डॉ. गुरचरण सिंह भूमिका से (दस्तक)
2. नया परिदृश्य, नरेंद्र मोहन के नाटक, डॉ. गुरुचरण सिंह, पृ. 112
3. संत तुकाराम, ई-पुस्तकालय, विकिपीडिया
4. मराठी अभंग, तुकाराम, विकिपीडिया
5. तुकाराम गाथा, अभंग, विकिपीडिया
6. मराठी अभंग, तुकाराम, विकिपीडिया
7. नया परिदृश्य, नरेंद्र मोहन के नाटक, सं. डॉ. गुरचरण सिंह, पृ. 116
8. नया परिदृश्य, नरेंद्र मोहन के नाटक, सं. डॉ. गुरचरण सिंह, पृ. 126

BOOK

डॉ० धर्मवीर भारती : कथेत्तर गद्य साहित्यकार

लेखिका

डॉ. लक्ष्मी मनशेट्टी

एम.ए., सेट, नेट, पी-एच.डी. (हिंदी)

साहित्य सागर

कानपुर-208 011

ISBN : 978-93-93354-04-4

पुस्तक	:	डॉ० धर्मवीर भारती : कथेत्तर गद्य साहित्यकार
लेखिका	:	डॉ. लक्ष्मी मनशेट्टी
प्रकाशक	:	साहित्य सागर 128/23 आर रवीन्द्र नगर, यशोदा नगर, कानपुर Email : p.prakashan03@gmail.com sahityasagar03@gmail.com Mob. : 9450766327, 9005904629
संस्करण	:	प्रथम, 2022
©	:	लेखकाधीन
मूल्य	:	795/-
शब्द-सज्जा	:	रुद्र ग्राफिक्स, कानपुर
मुद्रक	:	पूजा प्रिन्टर्स, कानपुर

अनुक्रम

1.	डॉ. धर्मवीर भारती का व्यक्तित्व एवं कृतित्व	15
2.	डॉ. धर्मवीर भारती के निबंध-साहित्य	53
3.	डॉ. धर्मवीर भारती के यात्रा-साहित्य	88
4.	डॉ. धर्मवीर भारती के संस्मरणात्मक साहित्य	112
5.	डॉ. धर्मवीर भारती के सम्पादकीय लेख एवं पत्र-लेखन-साहित्य	136
6.	डॉ. धर्मवीर भारती के आलोचनात्मक एवं अनूदित साहित्य	165
	उपसंहार	189
	सहायक ग्रंथ सूची	203

डॉ. हाशमबेग मिर्झा

जन्म	:	27 जुलाई 1973
शिक्षा	:	एम.ए., एम.फिल., पीएच.डी., सेट
लेखन	:	विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में 90 से अधिक शोधलेख प्रकाशिसत
प्रकाशित ग्रंथ	:	1. दक्खिनी हिंदी साहित्यकार मुल्ला वजही, 2. वैश्वीकरण की चुनौतियाँ और हिंदी, 3. हिंदी में अनूदित भारतीय साहित्य, 4. अनुवाद की भाषा एवं शब्दावली, 5. पारिभाषिक शब्दावली और अनुवाद अंत: सम्बंध, 6. भाषा भाषांतर आणी शब्दावली, 7. अधुनातन हिंदी कहानी साहित्य, 8. अधुनातन हिंदी उपन्यास साहित्य, 9. ऐ इमानवालों
शोध परियोजना	:	(UGC) की 3 लघु शोध परियोजना पूर्ण करने के उपरान्त इन दिनों (न्‍व) की बृहद् शोध परियोजना पर कार्य जारी है।
सम्प्रति	:	हिंदी विभागाध्यक्ष एवं असोसिएट प्रोफेसर, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग, कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, नलदुर्ग, जि. उस्मानाबाद, महाराष्ट्र-413602
संपर्क	:	09421951786, 09049695786,
ई-मेल	:	drmirzahm@gmail.com
ब्लॉग	:	dakhiniparcham.blogspot.com
निवास	:	ताज अपार्टमेंट, 4 थी मंजिल, 284, शक्कर पेठ, सोलापुर- 413005 (महा.)

अनुक्रम

♦ देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास ♦ देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास ♦ देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास ♦ नागरी लिपि के प्रयोग का विकास तथा विगत दस वर्षो में हुई प्रगति ♦ उद्भव एवं विकास के परिप्रेक्ष्य में मोडी ♦ देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास ♦ देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास ♦ देवनागरी लिपि और बंजारा बोली भाषा ♦ कम्प्युटर और देवनागरी लिपि ♦ कम्प्युटर और देवनागरी लिपि ♦ कम्प्युटर, इंटरनेट और नागरी लिपि ♦ संगणक एवं देवनागरी लिपि ♦ कम्प्यूटर और देवनागरी लिपि ♦ भाषायी एकता और नागरी लिपि ♦ भाषायी एकता और राष्ट्रीय एकता में देवनागरी का योगदान ♦ राष्ट्रीय एकता के लिए देवनागरी लिपि का योगदान ♦ राष्ट्रीय एकता के लिए सार्थक लिपि देवनागरी ♦ देवनागरी लिपि में सुधार की संभावनाएँ ♦ देवनागरी लिपि में सुधार की संभावनाएँ ♦ आधुनिक संदर्भ में नागरी लिपि ♦ वैश्विकरण और नागरी लिपि।

₹ 495/-
ISBN : 978-93-82234-48-7

देवनागरी लिपि की प्रयोजनीयता
डॉ. हाशमबेग मिर्झा

देवनागरी लिपि की प्रयोजनीयता

डॉ. हाशमबेग मिर्झा

प्रकाशक

साहित्य सागर

128/23 'आर' रवीन्द्र नगर

यशोदा नगर, कानपुर

★

ISBN : 978-93-82234-48-7

★

© लेखकाधीन

★

प्रथम संस्करण : 2018

★

मूल्य : 495/-

★

शब्द संयोजन :

रुद्र ग्राफिक्स

★

मुद्रक :

ग्लोबल प्रिंटिंग सर्विसेज, दिल्ली-110092

समर्पण

आचार्य डॉ. शहाबुद्दीन शेख

नागरी लिपि एवं हिन्दी के प्रचार प्रसार के लिए

जिन्होंने अपना पूरा जीवन समर्पित किया

Devnagri Lipi Ki Prayojniyta

***by :* Dr. Hashambaig Mirza**

Price : Four Hundred Ninety Five Only

13. संगणक एवं देवनागरी लिपि 87
डॉ. विनोदकुमार वायचळ
14. कम्प्यूटर और देवनागरी लिपि 91
डॉ. नागोराव बोईनवाड
15. भारत की अस्मीता : नागरी लिपि 95
डॉ. अशोक मर्डे
16. भाषाई एकता और राष्ट्रीय एकता में देवनागरी का योगदान 101
डॉ. रमेश कुरे
17. राष्ट्रीय एकता के लिए देवनागरी लिपि का योगदान 110
डॉ. मल्लीनाथ बिराजदार
18. राष्ट्रीय एकता के लिए सार्थक लिपि देवनागरी 115
डॉ. लक्ष्मी मनशेट्टी
19. देवनागरी लिपि में सुधार की संभावनाएँ 120
डॉ. ठाकुर विजयसिंह
20. देवनागरी लिपि में सुधार की संभावनाएँ 126
डॉ. रमेश आडे
21. आधुनिक संदर्भ में नागरी लिपि 132
कु. नसरीन खमरोद्दीन काझी
22. वैश्विकरण और देवनागरी लिपि 137
डॉ. संगीता सरवदे
संपर्क सूत्र 143

1

देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास

डॉ. सुरैय्या शेख

ब्राम्ही लिपि की उत्तरी शैली से चौथी शती में गुप्त लिपि और छटी शताब्दी में गुप्त लिपि से कुटिल लिपि विकसित हुई। इस कुटिल लिपि से आठवी--नववी शती में प्राचीन नागरी का विकास हुआ। दक्षिण भारत में इसे नंदी–नागरी कहते हैं। प्राचीन नागरी से अर्वाचीन, गुजराती, महाजनी, राजस्थानी, कैथी, मैथिली, असमिया, बंगला आदि लिपियॉं विकसित हुई। और पंन्द्रहवी–सोलहवी शताब्दी में आधुनिक नागरी का जन्म हुआ। वैसे इसका विकास संपूर्ण भारत में पहले से ही था और आज भी है क्योंकि संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थ बौध्द तथा जैन धर्म के ग्रन्थ इसी लिपि में लिखे जाते थे। इसका सबसे प्राचीन रूप कनौज के प्रतिहार वंशी राजा महेन्द्रपाल के संवत 653 के दानपत्र में मिलता है। ग्यारहवी शताब्दी की नागरी आधुनिक नागरी से कुछ भिन्न थी । आज का रूप नागरी ने बारहवी शताब्दी मे धारण किया। कुछ विद्वानों के मतानुसार इसका जन्म दक्षिण में हुआ और बाद में प्रचार उत्तर में हुआ। आज ये भारत की प्रमुख लिपि है। हिंदी, मराठी, संस्कृत, नेपाली आदि मे इसका प्रयोग होता है।

डॉ. ओझाजी इसका आरम्भ आठवी सदी से मानते हैं। सातवी सदी में गुजरात के राजा जयभट्ट के शिलालेख में आठवी शती में चित्रकुट के राजाओं ने तथा नववी शती में बड़ोदा के ध्रुवराज ने अपनी राजाज्ञाओं में इसका प्रयोग किया। आज इसका प्रयोग उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान, गुजरात , महाराष्ट्र, नेपाल आदि में होता है। आज ये भारत की प्रमुख लिपि है। मराठी में इसे बालबोध कहा जाता है। देवनागरी की वर्णमाला ग्यारहवी शती में स्थिर हो गयी । आधुनिक नागरी की प्रवृत्ति जल्दी लिखने के लिए शिरोरेखा हटानी की कही है। सत्रहवी शती से गुजरात ने शिरोरेखा हटाकर

संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रं का समसत वाङ्मय इसी लिपि में है। अहिंदी राजभाषी भी चाहे हिंदी से अनभिज्ञ रहें, किन्तु संस्कृत के माध्यम से देवनागरी आदि से अधिकांश लोक परिचित रहते है। भारत की सांस्कृतिक एकता में देवनागरी का भारी योगदान हो सकता है और है। थोड़ा – बहुत परिवर्तन कर देने पर संसा की कोई भी भाषा इसके माध्यम से सफलता पूर्वक लिखि जा सकती है।

इसके वर्णो में रोमन वर्णो के समान छोटे–बड़े (कॅपिटल और स्माल) वर्णो के अलग–अलग रूपों की उलझन नहीं है। इन विशेषताओं के कारण देवनागरी लिपि अत्यधिक वैज्ञानिक, सरल और देश की सांस्कृतिक परम्परा के अनूकूल है।

इस प्रकार किसी राष्ट्र की संस्कृति कें अंतर्गत वहॉ के निवासियों की रहन–सहन, धर्म, भाषा, परंपरा आदि का समावेश होता है। हमारे देश का भौगोलिक विस्तार बहुत अधिक है। यहाँ अनेक धर्म, विभिन्न जातियों सैंकडो भाषाएँ और बोलियाँ तथा भिन्न–भिन्न परंपराए पाई जाती है। किंतु इन विविधताओं के बीच भी ज्ञान, गुण संपन्न वैज्ञानिक लिपि देवनागरी के कारण एकता का सूत्र मौजूद है। हमें अपनी भाषा लिपि, धर्म, परंपरा आदि का अनुसरण करते हुए भारतीय संस्कृति की रक्षा करनी चाहिए। यह हमारा पवित्र कर्तव्य है। आज देवनागरी को संपूर्ण भारत की एक वैज्ञनिक एवं महत्वपूर्ण लिपि के रूपमें प्रतिष्ठा प्राप्त है, राष्ट्रीय एकता के लिए देवनागरी लिपि का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है, इससे स्पष्ट है कि देवनागरी एवं ऐसा विशाल वृक्ष है, जिसकी जडे अत्यंत मजबुत है, और प्राचीन भारतीय संस्कृति के अंतस्तलतक पहुँची हुआी है, और शाखाएँ 21 वी सदी के आसमान मे डोल रही है, आओ हम सब मिलकर इसे फैलाए और फुलाये और हृदय में बसायें, अन्तर्मन से प्यार करें जैसे –

भरा नहीं जो भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं।
हृदय नही, वह पत्थर है,
जिसमें स्वदेश, स्वभाषा, स्वलिपि का प्यार नहीं।

❖

18

राष्ट्रीय एकता के लिए सार्थक लिपि : देवनागरी

डॉ. लक्ष्मी मनशेट्टी

भारत बहुभाषिक देश है इसी कारण भारत में एक से अधिक लिपियां प्रचलित हैं। भारत में भाषागत लिपिगत की विविधता पाई जाती है, शायद इसी कारण आज राष्ट्रीय एकता बनी हुई दिखाई देती है। इसके मुख्य आधार राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगीत, राष्ट्रभाषा के साथ–साथ राष्ट्रीय लिपि को माना जाता है। भारतीय संविधान के 343 अनुच्छेद के अनुसार देवनागरी लिपि को राष्ट्रलिपि का दर्जा प्राप्त हो चुका है। इसे भारत की व्यापक तथा प्रमुख लिपि के रूप में अलग–अलग भाषा में साहित्य लिखा जाता है किंतु इन्हें एक सूत्र में बांधने का कार्य देवनागरी लिपि आसानी से कर रही है। भाषावार, प्रांतीयता के कारण आज प्रत्येक राज्य एक दूसरे से दूर जा रहा है। उनमें सांस्कृतिक, भावात्मक एकता बनाए रखने का कार्य देवनागरी लिपि के द्वारा किया जा सकता है। भारत में अनेक पंथ, धर्म, जाति, परंपरा, संस्कृति तथा भाषा होने के बावजूद भी इन में देवनागरी लिपि के माध्यम से एक सूत्र में बांधा जा सकता है। इसी कारण हमें देवनागरी लिपि राष्ट्रीय एकता में सार्थक दिखाई देती है।

भारत में देवनागरी लिपि को जानने वालों की संख्या सबसे अधिक मानी जाती है। उत्तर भारत का लगभग पूरा साहित्य देवनागरी लिपि में लिखित दिखाई देता है। साथही दक्षिण भारत में भी देवनागरी लिपि लोकप्रिय होती जा रही है। संस्कृत, नेपाली, हिंदी, मराठी, गुजराती आदि भाषाएं देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। साथही गुजराती, बांग्ला, असमिया, उड़िया, पंजाबी आदि भाषा की लिपि देवनागरी के समीप दिखाई देती है। अन्य भाषा का साहित्य भी देवनागरी में लिप्यंतरित या अनुवादित करने

कारण विश्व भर में काफी लोकप्रिय होता जा रहा है। इस अनुवादित साहित्य के कारण अन्य भाषा एवं लिपि का साहित्य देवनागरी लिपि के माध्यम से व्यापक एवं प्रसिद्ध होता जा रहा है। आधुनिक वैज्ञानिक युग में भी देवनागरी का प्रयोग आसानी से किया जा सकता है । आज अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिक एवं नवइलेक्ट्रॉनिक साधनों में देवनागरी लिपि का प्रयोग हो रहा है। भारत की बहुसंख्यक जनता देवनागरी लिपि के माध्यम से अपने भावों–विचारों को प्रकट कर सकती है। देवनागरी में अन्य भाषा के भावों, विचारों को भी ग्रहण करने की क्षमता है। इस कारण हम देवनागरी को सर्वसमावेशक लिपि कर सकते हैं। इसी कारण देवनागरी राष्ट्रीय तथा भावात्मक एकता बनाने में सहायक सिद्ध होगी इस संबंध में डॉ. विजय अग्रवाल लिखते हैं, किस लिपि में यह विशेषता है कि विश्व की समस्त भाषाओं की ध्वनियों को लिख सकते हैं, तमिल, तेलुगु, कन्नड़ तथा उर्दू भाषा को नागरी लिपि के माध्यम से सीखा जा सकता है।[1] नागरी लिपि की इसी विशेषता के कारण अन्य भाषा के साहित्य के प्रति हमारे मन में अपनत्व की भावना निर्माण हो सकती है।

आज के इस युग में वैज्ञानिक प्रगति के बल पर प्रत्येक देश अपनी ताकत बढ़ा रहा है। परिणामस्वरूप अन्य देशों से शत्रुता निर्माण हो रही है, आज प्रत्येक देश में अन्य देशों के प्रति तनाव, आतंक, डर, प्रतिशोध आदि भाव भरे हुए दिखाई दे रहे हैं। इस आतंक भरे वातावरण में एकता निर्माण करने का कार्य देवनागरी लिपि के द्वारा किया जा सकता है, क्योंकि देवनागरी में समन्वय एकता की भावना दिखाई देती है। इस संबंध में डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी ने अपने लेख में लिखा है, किसी भी राष्ट्र को केवल भौतिक सुख समृद्धि के सहारे नहीं अपितु एकता एवं समन्वय के द्वारा व्यक्ति संपन्न बनाया जा सकता है इस संदर्भ में भाषाई समन्वय के भी अनेक साधन हैं जो भावात्मक एकता को उत्पन्न कर हृदयों को हृदयों से जोड़ते हैं। इस दृष्टि से देवनागरी लिपि की का योगदान कम महत्वपूर्ण नहीं है।[2] अर्थात् देवनागरी लिपि में राष्ट्रीय एकता ओतप्रोत दिखाई देती है।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भी देवनागरी लिपि का उल्लेखनीय कार्य रहा है कई भाषाओं को एक सूत्र में बांधने का कार्य देवनागरी लिपि ने ही किया है। जिस कारण भिन्न–भिन्न भाषी भारतीय एकत्र आकर आजादी की लड़ाई में कूद पड़े थे। अपनी देशभक्ति की भावना को व्यक्त करने के लिए उन्हें देवनागरी के माध्यम से एक सशक्त साधन प्राप्त हो चुका था। आज कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक प्रत्येक राज्य अपनी–अपनी भाषा या लिपि में राजकाज चलाता हुआ दिखाई देता है। लेकिन इन सभी राज्यों को एक

सूत्र में बांधने का कार्य राष्ट्रलिपि देवनागरी कर रही है। अर्थात एक संपर्क लिपि के रूप में देवनागरी का कार्य महत्वपूर्ण साबित हो सकता है। राष्ट्रीय एकता में एक संपर्क लिपि के रूप में देवनागरी सार्थक लिपी दिखाई देती है। डॉ आरिफ नजीर के अनुसार, भारत की भावात्मक एकता को मजबूत बनाने के लिए आवश्यकता है कि एक ऐसी संपर्क लिपि अपनाई जाए, जिसके द्वारा सभी भाषाओं की उत्कृष्ट रचनाओं का रसास्वादन सर्वजन सुलभ और सुग्राहय बनाया जा सके इसी भावना को ध्यान में रखते हुए देश के अनेक महापुरुषों तथा रविंद्रनाथ टैगोर, महात्मा गांधी, संत विनोबा भावे और जवाहरलाल नेहरू आदि ने संपर्क एवं जोड़ लिपि के रूप में नागरिकों को अपनाए जाने पर बल दिया।[3]

एक भाषा में व्यक्त भाव को देवनागरी लिपि के माध्यम से अन्य भाषाओं में पहुंचाया जा सकता है। अतः हम कह सकते हैं कि देवनागरी लिपि संपर्क लिपि की भूमिका निभाते हुए राष्ट्रीय एकता को दृढ़ बना रही है। सांस्कृतिक एकता को दृढ़ बनाने में देवनागरी लिपि ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जाति, धर्म, पंथ, वंश, संस्कृति तथा परंपरा आदि में जो भी भेद है, उसे देवनागरी लिपि द्वारा आसानी से दूर कर भावात्मक एकता बढ़ाई जा सकती है। इस संबंध में प्रभुलाल चौधरी लिखते हैं, नागरी लिपि सीखने से किसी अन्य भाषा वालों को भी फायदा है वैसे उर्दू भी चले उसके साथ हर व्यक्ति नागरी सीखे और सब भाषाएं नागरी में लिखी जाए तो बाहयुक्ति या प्रयत्नों से जो प्रेम और विश्वास करने में दिक्कत होती है वह लिपि की एकता से साधेगा। संस्कृति और परंपरा की बात लेकर भी नागरी लिपि की कोई दिक्कत नहीं है। वह नागरी एकता स्थापित करने वाला एक अवरोधी शस्त्र और शास्त्र है।[4] आज हमारे देश के लिए सद्भावना, मानवता, सहिष्णुता, समन्वय, एकता, विश्वास आदि सद्गुणों की आवश्यकता है। इन सभी गुणों को प्राप्त करने के लिए देवनागरी लिपि का प्रयोग महत्वपूर्ण प्रतीत हो जाता है। जिस प्रकार एक माला में सभी प्रकार के फूल गुथें जा सकते हैं ठीक उसी प्रकार देवनागरी लिपि उपरोक्त गुणों को एक माला में गुथनें का कार्य कर रही है। देवनागरी को जानने वाले लोगों में सद्भावना के साथ–साथ राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रीय एकता आदि के भाव निर्माण हो सकते हैं। देवनागरी लिपि पूरे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने वाली लिपि है, इसी कारण नागरी को भारत की प्रमुख लिपि मानने में कोई हर्ज नहीं है। इस लिपि की व्यापकता के बारे में डॉ. उमेश चंद्र मिश्र लिखते हैं– देवनागरी भारत की व्यापक तथा प्रधान लिपि है, इसकी लोकप्रियता अन्य लिपियों से अधिक है, यह विश्व की सबसे अधिक

वैज्ञानिक (लोकप्रिय) लिपि है। 5 देवनागरी लिपि आज ही नहीं बल्कि प्राचीन काल से ही राष्ट्रीय एकता की आधार स्तंभ मानी जाती है। क्योंकि भारत का प्राचीन साहित्य (वेद) संस्कृत में लिखा हुआ है और संस्कृत देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। डॉ. इसपाक अली के अनुसार, देवनागरी अपने प्रचलन काल से ही राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान रही है, देवनागरी ने संपूर्ण राष्ट्र को राष्ट्रीय एकता की अस्मिता में बांधे रखा है। 6

देवनागरी लिपि ने प्राचीन काल से अपनी क्षमता सिद्ध की है। आज के वैश्वीकरण के युग में भी वह भारत की एकता को बनाए रखने में सदैव कारगर सिद्ध होगी। आज हमें मातृभाषा के साथ–साथ अन्य भाषा का ज्ञान होना अत्यावश्यक है क्योंकि जब तक हम भाषा का ज्ञान ग्रहण नहीं करेंगे कर सकेंगे तब तक हम में राष्ट्रीय एकता, सहिष्णुता तथा परोपकारी वृति निर्माण नहीं हो सकेगी। देवनागरी लिपि के माध्यम से हम अन्य भाषाओं को आसानी से ज्ञात कर सकेंगे, जिससे राष्ट्रीय एकात्मता बढ़ जाएगी।

प्राचीन काल से संपूर्ण राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने वाली इस लिपि को यूंही बनाए रखने के लिए हमें भी उसका प्रचार–प्रसार करना आवश्यक है। देवनागरी में लिखित मराठी, संस्कृत, नेपाली, हिंदी साहित्य काफी प्रसिद्ध दिखाई देता है। हिंदी भाषा तो आज विश्व की सबसे लोकप्रिय भाषा के पद पर आसीन होती हुई दिखाई देती है। इसका मूल कारण देवनागरी लिपि की लोकप्रियता मानी जा सकती है। नागरी लिपि राष्ट्रलिपि के साथ–साथ सामान्य लोगों की भी अपनी लिपि बन गई है। संपूर्ण भारत में ही नहीं बल्कि अन्य राष्ट्रों में भी इस लिपि को प्रमुख रूप में अपनाया जा रहा है। देवनागरी लिपि राष्ट्रीय एकता के साथ–साथ अंतर्राष्ट्रीय एकता बनाने की क्षमता रखती है।

अंत में,

अंत में इतना कहा जा सकता है कि देवनागरी लिपि ने राष्ट्रीय एकता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इस लिपि के कारण प्रत्येक राज्य का, प्रत्येक भाषा का साहित्य एकत्र आने में सहायक सिद्ध हुआ है। राष्ट्रलिपि के रूप में इस लिपि में संपूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बांधकर रखने का उल्लेखनीय कार्य किया है और निरंतर कर रही है। इस लिपि के गुण–विशेषता के कारण वह राष्ट्रलिपि के साथ–साथ विश्व–लिपि भी बन सकती है। कुल मिलाकर हम, कह सकते हैं कि, देवनागरी लिपि का राष्ट्रीय एकता में विशिष्ट स्थान रहा है। अतः देवनागरी लिपि राष्ट्रीय एकता में पूर्णता सार्थक दिखाई देती है।

संदर्भ

1 हिंदी भाषा : अतीत से आज तक – डॉ. विजय अग्रवाल पृ. क्र. 150
2 देवनागरी लिपि – सं डॉ. शहाबुद्दीन शेख – पृ. क्र. 109
3 देवनागरी लिपि – सं डॉ. शहाबुद्दीन शेख – पृ. क्र. 103
4 देवनागरी लिपि – सं डॉ. शहाबुद्दीन शेख – पृ. क्र. 132 , 133
5 हिंदी भाषा संरचना – डॉ. उमेशचंद्र मिश्र – पृ. क्र. 95
6 देवनागरी लिपि – सं डॉ. शहाबुद्दीन शेख – पृ. क्र. 124

❖

महाराष्ट्र में हिंदी

डॉ. हाशमबेग मिर्ज़ा

43.	हिंदी उपन्यास मे दलित दर्शन	डॉ. वडचकर एस.ए.	250
44.	प्रभाकर माचवे का हिन्दी सहित्य में योगदान	डॉ. शिवशेट्टे शंकर	253
45.	हिन्दी अनुवाद और वेदकुमार वेदालंकार	डॉ. विनोदकुमार वेदार्य	257
46.	व्यंग्यकार डॉ. शंकर पुणताम्बेकर	डॉ. बेवले असाराम	262
47.	दक्षिण के प्रवेश द्वार : डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे	डॉ. मनशेट्टी लक्ष्मी	266
48.	डॉ. जर्रा की कविताओं में व्यंग्य	डॉ. शिंदे किरण	272
49.	परिस्थिति से जूझता कवि डॉ. 'जर्रा काजी	डॉ. सय्यद शौकतअली	277
50.	महाराष्ट्र की हिन्दी पत्रिकाएँ	डॉ. मिरगणे अनुराधा	282
51.	हिंदी फिल्मों का हिंदी के विकास में योगदान	डॉ. जमीर शेख	286
52.	हिंदी फिल्मों का हिंदी के विकास मे योगदान'	डॉ. भालेराव विश्वनाथ	291
53.	हिन्दी फिल्मों का हिन्दी के विकास में योगदान	डॉ. प्रमोद पाटील	295
54.	हिंदी फिल्मों का हिंदी के विकास में योगदान	डॉ. रज्जाक शेख	299
55.	हिन्दी फिल्मों का हिन्दी के विकास में योगदान	डॉ. चव्हाण विश्वास	303
56.	प्रयोजनमूलक हिंदी के विकास में डॉ. देशमुख का योगदान	डॉ. बालाजी भुरे	307
57.	प्रयोजनमूलक हिन्दी में महाराष्ट्र के विद्वांनो का योगदान	डॉ. कोटुळे बायजा	316
	संपर्क सूत्र		326

47

दक्षिण के प्रवेश द्वार : डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे

डॉ. मनशेट्टी लक्ष्मी

संवैधानिक व्यवस्था के बाद भारत ने त्रिभाषा सूत्र को स्वीकार किया है। भारत के अधिकांश राज्यों में द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी के अध्ययन–अध्यापन की व्यवस्था की गई है। भारत के महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में हिंदी में अध्ययन–अध्यापन जारी है। इससे हिंदीत्तर भाषा–भाषी छात्र भी हिंदी साहित्य का अध्ययन कर रहे हैं। महाराष्ट्र में भी आज हिंदी को द्वितीय भाषा के रूप में सर्वसंमत रूपसे स्वीकार किया गया हैं। महाराष्ट्र के संत–नामदेव, चक्रधर स्वामी, ज्ञानेश्वर, संत एकनाथ, संत तुकाराम, समर्थ रामदास, संत गुलाबराय महाराज, स्वामी भोगानंद, संत तुकडोजी आदि ने मराठी के साथ–साथ हिंदी में भी अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। अर्थात, मध्यकाल से ही हिंदी साहित्य में महाराष्ट्र के साहित्यकारों का योगदान दिखाई देता है। महाराष्ट्र की भौगोलिक रचना भी इस तरह की है कि वह (महाराष्ट्र) उत्तर भारत और दक्षिण भारत के मध्य आता है। इसलिए इसे उत्तर तथा दक्षिण का प्रवेश द्वार भी कहा जाता है। जितने भी सूफी संत उत्तर से दक्षिण की और गए हैं, वे महाराष्ट्र से होकर गुजरे हैं। प्राचीन काल से ही महाराष्ट्र में राष्ट्रीयता की परम्परा दिखाई देती है। छत्रपति शिवाजी राष्ट्रीयता के द्योतक माने जाते हैं। महात्मा गांधी को सर्वाधिक अनुयायी महाराष्ट्र से ही मिले थे।

महाराष्ट्र को सामाजिक सुधार आंदोलन का केंद्र माना जाता है। महात्मा ज्योतिबा फुले, सावित्रीबाई फुले, न्या. रानडे, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आदि महामानव महाराष्ट्र भूमि में जन्मे थे। आधुनिक काल में महाराष्ट्र में हिंदी का प्रचार–प्रसार अधिक हुआ। विनोबा भावे, आ. काका कालेलकर, दादा धर्माधिकारी, अनंत गोपाल शेवडे, मधुकरराव चौधरी हिंदी के प्रमुख प्रचारक माने जाते हैं। हिंदी प्रचार–प्रसार की यह परम्परा आज भी जारी है। आधुनिक युग में ऐसे भी कई महाराष्ट्र के साहित्यकार हैं जो हिंदी भाषा और साहित्य को समृध्द बनाने का प्रयास कर रहे हैं। इनमें अनंत गोपाल शेवडे, डॉ. शंकर पुणतांबेकर, श्रीमती

मालती परूलेकर, श्रीमती मालती जोशी, श्रीपाद जोशी, डॉ. दामोदर खडसे, आदि उपन्यासकारों का उल्लेख किया जाता है। महाराष्ट्र के आधुनिक कवि हैं– आसावरी काकडे, सुरेखा गोडबोले, प्रभाकर माचवे, वसंत देव, डॉ. र. शं. केलकर, भृंग तुपकरी, दिनकर सोनवलकर, निर्मला चौहान, डॉ. बलभीमराव गोरे, ओमप्रकाश राठौर, डॉ. काझी सत्तार जर्रा, डॉ. पद्मा पाटील महाराष्ट्र के कई कहानीकार हैं। जिनका हिंदी साहित्य को समृध्द कराने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इनमें प्रमुख कहानीकार हैं– यमुना शेवडे, जोत्स्ना देवधर, विलास गुप्ते मुरलीधर जगताप, श्री गो. प. नेने, प्रभाकर माचवे। महाराष्ट्र के कुछ आलोचक भी हैं। जिन्होंने हिंदी आलोचना का क्षेत्र काफी विस्तृत किया है। इनमें प्रमुख महाराष्ट्र के कुछ हिंदी आलोचक भी हैं। इनमें प्रमुख आलोचक हैं– गजानन माधव मुक्तिबोध, डॉ. चंद्रकांत बांदिवडेकर, डॉ. चंद्रभानु सोनवणे, भगवानदास वर्मा, डॉ. अंबादास देशमुख, डॉ. अशोक कामत, डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे, डॉ. भ. ह. राजूरकर। महाराष्ट्र के साहित्यकारों ने अनुवाद विधा में भी अपना सराहनीय योगदान दिया है। डॉ. चंद्रकांत बांदिवडेकर, वेदकुमार वेदालंकार, डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे डॉ. चंद्रभान सोनवणे, डॉ. सुनील कुमार लवटे, श्री. वसंत देव, डॉ. विद्या चिटको आदि महाराष्ट्र के प्रमुख अनुंवादक माने जाते हैं। प्रयोजनमूलक हिंदी, साहित्याशास्त्र में भी कई महाराष्ट्रीयन साहित्यकारों का योगदान रहा है।

हिंदी–साहित्य में डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे का योगदान

डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे का हिंदी साहित्य जगत में अपना विशिष्ट स्थान है। उन्होंने अध्ययन, अध्यापन, अनुसंधान, संगठन, अनुवाद, आलोचना और कुछ मात्रा में सृजनात्मक लेखन आदि सभी क्षेत्रों को समृध्द किया हैं। उनका लेखन–कार्य अविरत गति से अब तक भी जारी है। उनका लेखन प्रगल्भ प्रतिभा एंव सामाजिक अनुभूति की यात्रा है। इनके संबंध में डॉ. अंबादास देशमुख लिखते हैं– "एक सशक्त लेखक के रूप में व हिंदी संसार में प्रस्तुत हुए हैं। डॉ. रणसुभे की साहित्यक काव्य कृतियों में उनके मानवीय दृष्टिकोण एवं उनके विचारो की गहराई तक पहुँचकर एक संवेदनशील कलाकार के मासूमियत भरे दिल की धड़कन को पहचानना है तो उनके जीवन से जुड़ी बातों को जानना जरूरी है।"[1] डॉ. रणसुभे का लेखन विविधात्मक है। वे एक महान युगदृष्टा माने जाते हैं।

डॉ. रणसुभे का जीवनवृत्त : डॉ. रणसुभे ने हिंदी साहित्य जगत में यशस्वी चहल कदमी करते हुए अपने अस्तितंव की अमिट छाप छोड़ी है। तथा अपनी एक अलग पहचान बनायी है। उनका जन्म 7 अगस्त, 1942 को पुराने हैदराबाद रियासत के जिला गुलबर्गा में हुआ। वहाँ की एक श्रमिक बस्ती में उनका जन्म हुआ, वहीं उनका बचपन व्यतीत हुआ। प्राथमिक शिक्षा से लेकर

स्नातक तक की शिक्षा भी इसी शहर में हुई। बी. ए. की उपाधि पुणे के शासकीय महाविद्यालय में प्राप्त की कठिन परिस्थितियों में भी उन्होंने एम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्हें बचपन से ही आर्थिक–विवंचना से जूझना पड़ा था। उनका परिवार भयानक आर्थिक–परेशानियों में जीता रहा है। उनके घर के सदस्यों की संख्या अधिक थी तथा कमाने वाले केवल पिताजी थे। इस अर्थाभाव के संबंध में डॉ. मजीद शेख ने लिखा है– ''स्वयं, डॉ. रणसुभे और उनके भाई–बहन बचपन से ही घर की आर्थिक स्थिति के कारण विविध प्रकार के काम करते थे। इन कार्यो से जो मजदूरी मिलती थी, उसी को बचाकर वे अपना स्कूल का खर्चा निकालते थे। इस कारण बचपन खेलने के लिए होता है– इसका अहसास तो कभी इन्हें नहीं हुआ।''[2]

डॉ. रणसुभे का विवाह 1973 को नागपुर की शोला बरड़े से हुआ। शीला जी ने नागपुर विश्व विद्यालय से बी.ए. किया था। रणसुभे जी का वैवाहिक–जीवन संपन्न रहा है। वे अपने परिवार की सारी जिम्मेदारी खुद पर ली थी। एक बहन का विवाह, तीन भाईयों की पढ़ाई–लिखाई आदि की जिम्मेदारी उन पर थी। इस जिम्मेदारी को उन्होंने अच्छी तरह से निभाकर ही विवाह का निर्णय लिया। रणसुभे जी परिवारिक जीवन में संतुष्ट दिखाई देते हैं। उनका व्यक्तिगत जीवन सुखमय रहा है।

अध्यापक : डॉ. रणसुभे : डॉ. रणसुभे ने एम.ए. (हिंदी) प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की थी। वे अधिव्याख्याता बनकर हिंदी की सेवा करना चाहते थे। अर्थार्जन का भी प्रश्न था। आखिर उनका यह सपना पूरा हो गया। वे अधिव्याख्याता बन गये। इस नौकरी के संबंध में डॉ. मजीद शेख लिखते हैं– ''जून में (1965 ई.) एक विज्ञापन आया था, दयानंद महाविद्यालय लातूर का। इनके जीवन का यह पहला आवेदन–पत्र तथा पहला साक्षात्कार था। करीब 35 सार्थक आए थे। इस वक्त विभागाध्यक्ष के रूप में प्रो. भूदेव जी पाटील थे। वे गुणवत्ता को सर्वाधिक महत्व देते थे। साक्षात्कार के पूर्व उनका लातूर शहर में कोई नहीं था, न वे किसी को जानते थे। साक्षात्कार तीन बार हुआ और उनका इस महाविद्यालय में 'अधिव्याख्याता' के रूप में चयन हुआ। यहाँ पर वे इतने रम गए कि बाद में कई जगह से बुलावा आया पर वे गए नहीं।''[3] रणसुभेजी लातूर के दयानंद महाविद्यालय में कार्यरत थे। वे हिंदी साहित्य बहुत ही लगन से पढ़ाते। अध्यापन–कार्य के संबंध में वे लिखते हैं– ''संभवतः सन 1973–74 में मुझ पर यह जिम्मेदारी डाली गयी थी कि मैं एम.ए. हिंदी छात्रों को आधुनिक काल का इतिहास पढ़ाऊ। यह एक बड़ा ही चुनौतीपूर्ण अध्यापन कार्य था। क्योंकि इतिहास और वह भी साहित्य का इतिहास पढ़ाना काफी श्रम का कार्य होता है। उस पर मेरी यह राय रही है कि जहाँ तक हो सके मूल कृतियों को पढ़कर मैं अपना मत बना लूँ।

... इतने परिश्रम के बाद मैंने अपना अध्यापन कार्य शुरू किया।"[4] इससे स्पष्ट हो जाता है कि रणसुभे जी कितनी मेहनत से अध्यापन– कार्य करते थे। इसीलिए वे छात्रों में लोकप्रिय रहे हैं। आज भी उनके कई छात्र जो अब अधिव्याख्याता बने हैं, उनके (रणसुभे जी) अध्यापन–कार्य की प्रशंसा करते हुए दिखाई देते हैं। उन्होंने अपने छात्रों के दिल में एक अलग–सी छवि बनायी है। इससे उन्हें एक सफल अध्यापक कह सकते हैं।

सृजनकार : डॉ. रणसुभे : डॉ. रणसुभे प्रतिभा के धनी साहित्यकार माने जाते हैं। उन्होंने काफी मात्रा में लेखन–कार्य किया है। उन्होंने अनुवाद लेखन, सभीक्षात्मक लेखन, सृजनात्मक लेखन, अन्य लेखन, वैचारिक लेखन, सम्पादन लेखन आदि किया है। इसके अतिरिक्त मराठी में भी लेखन किया है। डॉ. रणसुभे ने कई किताबें लिखी है, जो छात्र तथा शोध–छात्र के लिए उपयोगी सिध्द हो सकती है। हिंदी साहित्य पर भी उन्होंने लेखन कार्य किया है।

अनुवादक : डॉ. रणसुभे : डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे ने हिंदी साहित्य को अनुवाद के माध्यम से मौलिक कृतियाँ दी हैं जिससे हिंदी साहित्य जगत उनका ऋणी हैं। अनुवाद राष्ट्र एवं साहित्य सेवा का एक अभिनंदनीय कर्म हैं और उनका महत्व निर्विवाद रूप से असंदिग्ध हैं। भारत जैसे बहुभाषा–भाषी देश के लिए अनुवाद का महत्व नकारा नहीं जा सकता। यह कार्य न केवल दो भाषाओं की भाव धाराओं या दो जातीय संस्कृतियों को जोडता हैं, अपितु उनमें अंतर्निहित सांस्कृतिक एवं साहित्यिक सूत्रों की एकात्मता को उजागर करता है। अनुवाद को दुष्कर कार्य माना जाता है। इस संबंध में डॉ. रणसुभे लिखते हैं– "अपनी यातना के बोझ से मुक्त होने के लिए मेरे सामने दो ही मार्ग थे, एक तो मैं खुद अपनी यातना को सृजनात्मक रूप देता अथवा अन्य यातनामय जीवन जीने वालों की सृजनात्मक कृतियों का अनुवाद करता।"[5] डॉ. रणसुभे ने सृजनात्मक साहित्य का अनुवाद किया हैं। इसके अंतर्गत आत्मकथा, नाटक, कहानी तथा उपन्यास का अनुवाद आता है।

'आठवणीचे पक्षी' मराठी के दलित आत्मकथाकार प्र.ई. सोनकांबले की आत्मकथा है। इसका हिंदी अनुवाद डॉ. रणसुभे ने 'यादो के पंछी' नाम से किया है। इसका प्रथम हिंदी संस्करण सन 1983 को निकला है। इसमें प्र.ई. सोनकांबले के जीवन की व्यथा है। सोनकांबलेजी को अपनी दलित जाति के कारण बचपन में कई बार अपमानित होना पड़ा। लेकिन अदम्य जिजीविषा के कारण उन्होंने कई बार भूखा रहकर, मृत जानवर का मांस खाकर, अपमान सहनकर अपनी पढाई पूरी की, और सफल व्यक्तित्व के रूप में प्रतिष्ठित हुए। इस अनूदित कृति के बारे में डॉ. सन्मुख नागनाथ मुच्छेट ने लिखा है– "प्रस्तुत आत्मकथा की मूल संवेदना भूख से पीड़ित व्यक्ति की संवेदना है। साथ ही सवर्णो का दलितों के प्रति जो

अमानवीय व्यवहार है इसका दर्पण यह आत्मकथा है।''[6]

डॉ. रणसुभे ने अक्करमाशी (शरण कुमार लिंबाले) का भी अनुवाद किया है। उन्होंने 'अक्करमाशी' शब्द हिंदी में रूढ़ किया। जिसका अर्थ है– अवैध संतान। एस. जे. गायकवाड के अनुसार– ''यह दलित आत्मकथा समग्र मनुष्य जीवन को दहला देनेवाली आत्मकथा हैं। इसमें सवर्ण और अवर्ण जाति के स्त्री–पुरुष के अवैध संबंधों से जन्मी संतान शरणकुमार लिंबाले का समस्या ग्रस्त जीवन अभिव्यक्त हुआ है।''[7] इस अनूदित कृति द्वारा अनौरस संतति की समस्या को दर्शाया गया है। रणसुभे जी ने उठाईगीर (लक्ष्मण गायकवाड) इस आत्मकथा का भी 'उचक्का (उचल्या)' नाम से अनुवाद किया है। इसमें समाजव्यवस्था एवं वर्णव्यवस्था से पीड़ित मनुष्य जीवन का अंकन है। इसमें मानव जीवन की त्रासदी को अंकित किया गया हैं। एक पीड़ित कार्यकर्ता की संघर्षमयी गाथा को व्यक्त किया गया है। लक्ष्मण गायकवाड के अनुसार– ''यह आत्मकथा वास्तव में एक कार्यकर्ता का मुक्त चिंतन है। इस कारण इस आत्मकथा का साहित्यिक मूल्यांकन करने की अपेक्षा समाजशास्त्रीय मूल्यांकन हो यह अपेक्षा है।''[8]

डॉ. रणसुभे ने आत्मकथा के अलावा 'साक्षीपुरम' नाटक, छः दलित कहानियाँ, 'हिंदू' नामक उपन्यास तथा अन्य वैचारिक लेखंन आदि का भी हिंदी में अनुवाद किया है। इस प्रकार रणसुभे जी ने अनुवाद को साधना के रूप में स्वीकार किया है। इसी साधना के बदौलत उनका अनुवाद सफल रहा है। अतः रणसुभे जी को एक सफल अनुवादक माना जा सकता है।

आलोचक : डॉ. रणसुभे : आलोचना के क्षेत्र में रणसुभेजी का नाम सराहनीय माना जाता है। आलोचना लेखन से उनकी प्रतिभा, अध्ययनशीलता, तथा मौलिक समीक्षा–दृष्टि के दर्शन होते हैं। उन्होंने सात रचनाओं की आलोचना की हैं– कहानीकार कमलेश्वर : संदर्भ और प्रकृति, 'कहानीकार अज्ञेय : संदर्भ और प्रकृति, हिंदी उपन्यास : विविध आयाम, देश विभाजन और हिंदी कथा–साहित्य, हिंदी साहित्य का अभिनव इतिहास, साहित्यशास्त्र तथा आधुनिक मराठी साहित्य का प्रवृत्तिमूलक इतिहास।

'कहानीकार कमलेश्वर संदर्भ और प्रकृति' में रणसुभेजी ने कमलेश्वर की बारह कहानियों की आलोचना की है। 'कहानीकार अज्ञेय संदर्भ और प्रकृति' में अज्ञेय जी की कहानियों की आलोचना की हैं। 'हिंदी उपन्यास विविध आयाम' में हिंदी की महत्वपूर्ण सोलह उपन्यासों पर आलोचना की है। 'देश विभाजन और हिंदी कथा–साहित्य' में रणसुभे जी ने देश विभाजन से संबंधित जो कथा साहित्य लिखा गया है, उस पर अपने अलोचनात्मक विचारों को स्पष्ट किया है। 'साहित्यशास्त्र' में भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्यशास्त्र की अवधारणा को व्यक्त

किया गया है। 'विभाजन' में रीतिकाल के विभाजन–रीतिबध्द, रीतिसिध्द रीतिमुक्त–पर आपने आलोचनात्मक विचार रखे हैं। 'आधुनिक मराठी साहित्य का प्रवृत्तिमूलक इतिहास' यह भी रणसुभे की आलोचनात्मक कृति है। इस कृति के बारे में डॉ. रणसुभे लिखते हैं– ''अपनी मातृभाषा की आधुनिक प्रवृत्तियों का परिचय राष्ट्रभाषा के अध्येयताओं को करा देने के उद्देश्य से ही यह प्रवृत्ति लिखी है।''[9] इन कृतियों से स्पष्ट होता है कि अलग–अलग विषयों पर रणसुभे जी ने लेख लिखा है। इससे उनकी आलोचना दृष्टि देखने को मिलती है। जिससे उन्हें एक लोकप्रिय आलोचक माना जा सकता है।

रणसुभेजी ने वैचारिक लेखन, फुटकल लेखन, सृजनात्मक लेखन तथा सम्पादन लेखन भी किया है। इससे उनकी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय मिल सकता है।

निष्कर्ष : यह कहा जा सकता है कि, रणसुभेजी ने जो भी लेखन कार्य किया हैं वह मौलिक तथा उद्देश्यपूर्ण रहा है। वैचारिक लेखन, आलोचना लेखन, सृजनात्मक लेखन, सम्पादन लेखन में वे अपना एक अलग स्थान रखते हैं। उन्हें सबसे अधिक लोकप्रियता अनुवादक के रूप में प्राप्त हुई है। उनके द्वारा अनूदित कृतियो ने उपेक्षित जाति के दुःख, दर्द समाज के सम्मुख रख दिया है। महाराष्ट्र के हिंदी में उनका सराहनीय योगदान रहा है। उन्हें हिंदी की सबसे बड़ी उपलब्धि कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। उनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व प्रशंसनीय रहा है। उन्हें दक्षिण के प्रवेश द्वार कहा जाता है।

संदर्भ

1. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे : व्यक्तित्व एवं कृतित्व– डॉ. मजीद शेख, डॉ. अंबादास देशमुख की भूमिका से
2. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे : व्यक्तित्व एवं कृतित्व – डॉ. मजीद शेख – पृ. 21
3. वही, पृ. 31
4. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे – भूमिका से
5. गौरव ग्रंथ' प्रा. डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे, उत्तरशती चिंतन वीथियाँ – डॉ. सुरेश माहेश्वरी – पृ. 25
6. हिंदी में अनूदित भारतीय साहित्य (राष्ट्रीय संगोष्ठी) में, डॉ. सन्मुख नागनाथ मुच्छटे का लेख, पृ. 38
7. वही, पृ. 172
8. उचक्का (लक्ष्मण गायकवाड) : अनुवाद डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे – लक्ष्मण गायकवाड की भूमिका से
9. आधुनिक मराठी साहित्य का प्रवृत्तिमूलक इतिहास–डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे, पृ. 5.

डॉ. हाशमबेग मिर्झा

जन्म	:	27 जुलाई 1973
शिक्षा	:	एम.ए., एम.फिल., पीएच.डी., सेट
लेखन	:	विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में 90 से अधिक शोधलेख प्रकाशिसत
प्रकाशित ग्रंथ	:	1. दक्खिनी हिंदी साहित्यकार मुल्ला वजही, 2. वैश्वीकरण की चुनौतियाँ और हिंदी, 3. हिंदी में अनूदित भारतीय साहित्य, 4. अनुवाद की भाषा एवं शब्दावली, 5. पारिभाषिक शब्दावली और अनुवाद अंत: सम्बंध, 6. भाषा भाषांतर आणी शब्दावली, 7. अधुनातन हिंदी कहानी साहित्य, 8. अधुनातन हिंदी उपन्यास साहित्य, 9. ऐ इमानवालों
शोध परियोजना	:	(UGC) की 3 लघु शोध परियोजना पूर्ण करने के उपरान्त इन दिनों (ना) की बृहद् शोध परियोजना पर कार्य जारी है।
सम्प्रति	:	हिंदी विभागाध्यक्ष एवं असोसिएट प्रोफेसर, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग, कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, नलदुर्ग, जि. उस्मानाबाद, महाराष्ट्र-413602
संपर्क	:	09421951786, 09049695786,
ई-मेल	:	drmirzahm@gmail.com
ब्लॉग	:	dakhiniparcham.blogspot.com
निवास	:	ताज अपार्टमेंट, 4 थी मंजिल, 284, शक्कर पेठ, सोलापुर- 413005 (महा.)

अनुक्रम

♦ देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास ♦ देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास ♦ देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास ♦ नागरी लिपि के प्रयोग का विकास तथा विगत दस वर्षो में हुई प्रगति ♦ उद्भव एवं विकास के परिप्रेक्ष्य में मोडी ♦ देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास ♦ देवनागरी लिपि : उद्भव और विकास ♦ देवनागरी लिपि और बंजारा बोली भाषा ♦ कम्प्युटर और देवनागरी लिपि ♦ कम्प्युटर और देवनागरी लिपि ♦ कम्प्युटर, इंटरनेट और नागरी लिपि ♦ संगणक एवं देवनागरी लिपि ♦ कम्प्यूटर और देवनागरी लिपि ♦ भाषायी एकता और नागरी लिपि ♦ भाषायी एकता और राष्ट्रीय एकता में देवनागरी का योगदान ♦ राष्ट्रीय एकता के लिए देवनागरी लिपि का योगदान ♦ राष्ट्रीय एकता के लिए सार्थक लिपि देवनागरी ♦ देवनागरी लिपि में सुधार की संभावनाएँ ♦ देवनागरी लिपि में सुधार की संभावनाएँ ♦ आधुनिक संदर्भ में नागरी लिपि ♦ वैश्विकरण और नागरी लिपि।

S2

₹ 495/-

ISBN : 978-93-82234-48-7

देवनागरी लिपि की प्रयोजनीयता ■ डॉ. हाशमबेग मिर्झा

देवनागरी लिपि की प्रयोजनीयता

डॉ. हाशमबेग मिर्झा

प्रकाशक
साहित्य सागर
128/23 'आर' रवीन्द्र नगर
यशोदा नगर, कानपुर

★

ISBN : 978-93-82234-48-7

★

© लेखकाधीन

★

प्रथम संस्करण : 2018

★

मूल्य : 495/-

★

शब्द संयोजन :
रुद्र ग्राफिक्स

★

मुद्रक :
ग्लोबल प्रिंटिंग सर्विसेज, दिल्ली-110092

Devnagri Lipi Ki Prayojniyta
***by :* Dr. Hashambaig Mirza**
Price : Four Hundred Ninety Five Only

समर्पण

प्राचार्य डॉ. शहाबुद्दीन शेख
नागरी लिपि एवं हिन्दी के प्रचार प्रसार के लिए
जिन्होंने अपना पूरा जीवन समर्पित किया

13. संगणक एवं देवनागरी लिपि — 87
डॉ. विनोदकुमार वायचळ
14. कम्प्यूटर और देवनागरी लिपि — 91
डॉ. नागोराव बोईनवाड
15. भारत की अस्मीता : नागरी लिपि — 95
डॉ. अशोक मर्डे
16. भाषाई एकता और राष्ट्रीय एकता में देवनागरी का योगदान — 101
डॉ. रमेश कुरे
17. राष्ट्रीय एकता के लिए देवनागरी लिपि का योगदान — 110
डॉ. मल्लीनाथ बिराजदार
18. राष्ट्रीय एकता के लिए सार्थक लिपि देवनागरी — 115
डॉ. लक्ष्मी मनशेट्टी
19. देवनागरी लिपि में सुधार की संभावनाऍं — 120
डॉ. ठाकुर विजयसिंह
20. देवनागरी लिपि में सुधार की संभावनाऍं — 126
डॉ. रमेश आडे
21. आधुनिक संदर्भ में नागरी लिपि — 132
कु. नसरीन खमरोद्दीन काझी
22. वैश्विकरण और देवनागरी लिपि — 137
डॉ. संगीता सरवदे
संपर्क सूत्र — 143

1

देवनागरी लिपि : उद्‌भव और विकास

डॉ. सुरैय्या शेख

ब्राम्ही लिपि की उत्तरी शैली से चौथी शती में गुप्त लिपि और छटी शताब्दी में गुप्त लिपि से कुटिल लिपि विकसित हुई। इस कुटिल लिपि से आठवी–नववी शती में प्राचीन नागरी का विकास हुआ। दक्षिण भारत में इसे नंदी–नागरी कहते हैं। प्राचीन नागरी से अर्वाचीन, गुजराती, महाजनी, राजस्थानी, कैथी, मैथिली, असमिया, बंगला आदि लिपियॉं विकसित हुई। और पंन्द्रहवी–सोलहवी शताब्दी में आधुनिक नागरी का जन्म हुआ। वैसे इसका विकास संपूर्ण भारत में पहले से ही था और आज भी है क्योंकि संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थ बौध्द तथा जैन धर्म के ग्रन्थ इसी लिपि में लिखे जाते थे। इसका सबसे प्राचीन रूप कनौज के प्रतिहार वंशी राजा महेन्द्रपाल के संवत 653 के दानपत्र में मिलता है। ग्यारहवी शताब्दी की नागरी आधुनिक नागरी से कुछ भिन्न थी । आज का रूप नागरी ने बारहवी शताब्दी मे धारण किया। कुछ विद्वानों के मतानुसार इसका जन्म दक्षिण में हुआ और बाद में प्रचार उत्तर में हुआ। आज ये भारत की प्रमुख लिपि है। हिंदी, मराठी, संस्कृत, नेपाली आदि मे इसका प्रयोग होता है।

डॉ. ओझाजी इसका आरम्भ आठवी सदी से मानते हैं। सातवी सदी में गुजरात के राजा जयभट्ट के शिलालेख में आठवी शती में चित्रकुट के राजाओं ने तथा नववी शती में बड़ोदा के ध्रुवराज ने अपनी राजाज्ञाओं में इसका प्रयोग किया। आज इसका प्रयोग उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान, गुजरात , महाराष्ट्र, नेपाल आदि में होता है। आज ये भारत की प्रमुख लिपि है। मराठी में इसे बालबोध कहा जाता है। देवनागरी की वर्णमाला ग्यारहवी शती में स्थिर हो गयी । आधुनिक नागरी की प्रवृत्ति जल्दी लिखने के लिए शिरोरेखा हटानी की कही है। सत्रहवी शती से गुजरात ने शिरोरेखा हटाकर

संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रं का समसत वाङ्मय इसी लिपि में है। अहिंदी राजभाषी भी चाहे हिंदी से अनभिज्ञ रहें, किन्तु संस्कृत के माध्यम से देवनागरी आदि से अधिकांश लोक परिचित रहते है। भारत की सांस्कृतिक एकता में देवनागरी का भारी योगदान हो सकता है और है। थोड़ा – बहुत परिवर्तन कर देने पर संसा की कोई भी भाषा इसके माध्यम से सफलता पूर्वक लिखि जा सकती है।

इसके वर्णो में रोमन वर्णो के समान छोटे–बड़े (कॅपिटल और रमाल) वर्णो के अलग–अलग रूपों की उलझन नहीं है। इन विशेषताओं के कारण देवनागरी लिपि अत्यधिक वैज्ञानिक, सरल और देश की सांस्कृतिक परम्परा के अनूकूल है।

इस प्रकार किसी राष्ट्र की संस्कृति कें अंतर्गत वहाँ के निवासियों की रहन–सहन, धर्म, भाषा, परंपरा आदि का समावेश होता है। हमारे देश का भौगोलिक विस्तार बहुत अधिक है। यहाँ अनेक धर्म, विभिन्न जातियों सैंकड़ो भाषाएँ और बोलियाँ तथा भिन्न–भिन्न परंपराए पाई जाती है। किंतु इन विविधताओं के बीच भी ज्ञान, गुण संपन्न वैज्ञानिक लिपि देवनागरी के कारण एकता का सूत्र मौजूद है। हमें अपनी भाषा लिपि, धर्म, परंपरा आदि का अनुसरण करते हुए भारतीय संस्कृति की रक्षा करनी चाहिए। यह हमारा पवित्र कर्तव्य है। आज देवनागरी को संपूर्ण भारत की एक वैज्ञानिक एवं महत्वपूर्ण लिपि के रूपमें प्रतिष्ठा प्राप्त है, राष्ट्रीय एकता के लिए देवनागरी लिपि का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है, इससे स्पष्ट है कि देवनागरी एवं ऐसा विशाल वृक्ष है, जिसकी जडे अत्यंत मजबुत है, और प्राचीन भारतीय संस्कृति के अंतस्तलतक पहुँची हुओ है, और शाखाएँ 21 वी सदी के आसमान मे डोल रही है, आओ हम सब मिलकर इसे फैलाए और फुलाये और हृदय में बसायें, अन्तर्मन से प्यार करें जैसे –

भरा नहीं जो भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं।
हृदय नही, वह पत्थर है,
जिसमें स्वदेश, स्वभाषा, स्वलिपि का प्यार नहीं।

❖

18

राष्ट्रीय एकता के लिए सार्थक लिपि : देवनागरी

डॉ. लक्ष्मी मनशेट्टी

भारत बहुभाषिक देश है इसी कारण भारत में एक से अधिक लिपियां प्रचलित हैं। भारत में भाषागत लिपिगत की विविधता पाई जाती है, शायद इसी कारण आज राष्ट्रीय एकता बनी हुई दिखाई देती है। इसके मुख्य आधार राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगीत, राष्ट्रभाषा के साथ–साथ राष्ट्रीय लिपि को माना जाता है। भारतीय संविधान के 343 अनुच्छेद के अनुसार देवनागरी लिपि को राष्ट्रलिपि का दर्जा प्राप्त हो चुका है। इसे भारत की व्यापक तथा प्रमुख लिपि के रूप में अलग–अलग भाषा में साहित्य लिखा जाता है किंतु इन्हें एक सूत्र में बांधने का कार्य देवनागरी लिपि आसानी से कर रही है। भाषावार, प्रांतीयता के कारण आज प्रत्येक राज्य एक दूसरे से दूर जा रहा है। उनमें सांस्कृतिक, भावात्मक एकता बनाए रखने का कार्य देवनागरी लिपि के द्वारा किया जा सकता है। भारत में अनेक पंथ, धर्म, जाति, परंपरा, संस्कृति तथा भाषा होने के बावजूद भी इन में देवनागरी लिपि के माध्यम से एक सूत्र में बांधा जा सकता है। इसी कारण हमें देवनागरी लिपि राष्ट्रीय एकता में सार्थक दिखाई देती है।

भारत में देवनागरी लिपि को जानने वालों की संख्या सबसे अधिक मानी जाती है। उत्तर भारत का लगभग पूरा साहित्य देवनागरी लिपि में लिखित दिखाई देता है। साथही दक्षिण भारत में भी देवनागरी लिपि लोकप्रिय होती जा रही है। संस्कृत, नेपाली, हिंदी, मराठी, गुजराती आदि भाषाएं देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। साथही गुजराती, बांग्ला, असमिया, उड़िया, पंजाबी आदि भाषा की लिपि देवनागरी के समीप दिखाई देती है। अन्य भाषा का साहित्य भी देवनागरी में लिप्यंतरित या अनुवादित करने

वैज्ञानिक (लोकप्रिय) लिपि है। 5 देवनागरी लिपि आज ही नहीं बल्कि प्राचीन काल से ही राष्ट्रीय एकता की आधार स्तंभ मानी जाती है। क्योंकि भारत का प्राचीन साहित्य (वेद) संस्कृत में लिखा हुआ है और संस्कृत देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। डॉ. इसपाक अली के अनुसार, देवनागरी अपने प्रचलन काल से ही राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान रही है, देवनागरी ने संपूर्ण राष्ट्र को राष्ट्रीय एकता की अस्मिता में बांधे रखा है। 6

देवनागरी लिपि ने प्राचीन काल से अपनी क्षमता सिद्ध की है। आज के वैश्वीकरण के युग में भी वह भारत की एकता को बनाए रखने में सदैव कारगर सिद्ध होगी। आज हमें मातृभाषा के साथ–साथ अन्य भाषा का ज्ञान होना अत्यावश्यक है क्योंकि जब तक हम भाषा का ज्ञान ग्रहण नहीं करेंगे कर सकेंगे तब तक हम में राष्ट्रीय एकता, सहिष्णुता तथा परोपकारी वृति निर्माण नहीं हो सकेगी। देवनागरी लिपि के माध्यम से हम अन्य भाषाओं को आसानी से ज्ञात कर सकेंगे, जिससे राष्ट्रीय एकात्मता बढ़ जाएगी।

प्राचीन काल से संपूर्ण राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने वाली इस लिपि को यूंही बनाए रखने के लिए हमें भी उसका प्रचार–प्रसार करना आवश्यक है। देवनागरी में लिखित मराठी, संस्कृत, नेपाली, हिंदी साहित्य काफी प्रसिद्ध दिखाई देता है। हिंदी भाषा तो आज विश्व की सबसे लोकप्रिय भाषा के पद पर आसीन होती हुई दिखाई देती है। इसका मूल कारण देवनागरी लिपि की लोकप्रियता मानी जा सकती है। नागरी लिपि राष्ट्रलिपि के साथ–साथ सामान्य लोगों की भी अपनी लिपि बन गई है। संपूर्ण भारत में ही नहीं बल्कि अन्य राष्ट्रों में भी इस लिपि को प्रमुख रूप में अपनाया जा रहा है। देवनागरी लिपि राष्ट्रीय एकता के साथ–साथ अंतर्राष्ट्रीय एकता बनाने की क्षमता रखती है।

अंत में,

अंत में इतना कहा जा सकता है कि देवनागरी लिपि ने राष्ट्रीय एकता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इस लिपि के कारण प्रत्येक राज्य का, प्रत्येक भाषा का साहित्य एकत्र आने में सहायक सिद्ध हुआ है। राष्ट्रलिपि के रूप में इस लिपि में संपूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बांधकर रखने का उल्लेखनीय कार्य किया है और निरंतर कर रही है। इस लिपि के गुण–विशेषता के कारण वह राष्ट्रलिपि के साथ–साथ विश्व–लिपि भी बन सकती है। कुल मिलाकर हम, कह सकते हैं कि, देवनागरी लिपि का राष्ट्रीय एकता में विशिष्ट स्थान रहा है। अतः देवनागरी लिपि राष्ट्रीय एकता में पूर्णता सार्थक दिखाई देती है।

संदर्भ

1 हिंदी भाषा : अतीत से आज तक – डॉ. विजय अग्रवाल पृ. क्र. 150

2 देवनागरी लिपि – सं डॉ. शहाबुद्दीन शेख – पृ. क्र. 109

3 देवनागरी लिपि – सं डॉ. शहाबुद्दीन शेख – पृ. क्र. 103

4 देवनागरी लिपि – सं डॉ. शहाबुद्दीन शेख – पृ. क्र. 132 , 133

5 हिंदी भाषा संरचना – डॉ. उमेशचंद्र मिश्र – पृ. क्र. 95

6 देवनागरी लिपि – सं डॉ. शहाबुद्दीन शेख – पृ. क्र. 124

❖